शिक्षा की बुनियाद

मार्च–मई, 2012 (मूल क्रमांक 32) अंक – 1

विद्या भवन सोसायटी

Azim Premji University

विद्या भवन सोसायटी

शिक्षा की बुनियाद

Azim Premji University

मार्च–मई, 2012 (मूल क्रमांक 32) अंक – 1

परामर्श–प्रबन्धन
हृदय कांत दीवान
गिरिधर एस.

संपादन प्रभारी
भाग चन्द्र कुमावत

संपादक मण्डल
गुरबचन सिंह
के.आर. शर्मा
कमलेश जोशी
गिरीश शर्मा
रजनी द्विवेदी

चित्रांकन
प्रशांत सोनी

कवर एवं ले–आउट
इसरार अहमद

टाइपिंग सहयोग
शाकिर अहमद

स्वामी
विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर

संपादकीय पता
विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केंद्र
फतेहपुरा, मोहन सिंह मेहता मार्ग
उदयपुर (राज.) 313 004
फोन : (0294) 2451497
Email : vbsudr@yahoo.com

इस अंक में...

1 संपादकीय

3 नई तालीम की कहानी : जो देखा–समझा
मार्जोरी साइक्स

8 असफल नई तालीम नहीं, हम हुए
शिव दत्त

13 नन्हा मदरसे चला
डा. जाकिर हुसैन

19 खेल–खेल में गणित
अमोद कारखानीस

23 बागवानी का आनंद
विश्व विजया सिंह

26 डायरी के पन्ने
हेमराज भट्ट

29 लक्ष्य की ओर बढ़ने की कवायद
गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का सार्वजनीकरण एवं स्कूल सुधार परियोजना टीम

34 पहल बुनियादी शिक्षक तैयार करने की
भागचन्द्र कुमावत

38 भारत में अंग्रेजी की समस्या, परतें खोलती एक किताब
कालू राम शर्मा

43 मिट्ठी
यशोधरा कनेरिया

इस अंक की सहयोग राशि– व्यक्तिगत डाक/कूरियर खर्च सहित : ₹50/–, वार्षिक– ₹200/– तथा संस्था हेतु वार्षिक सहयोग राशि ₹400/–
चेक/ड्राफ्ट/एम.ओ. – विद्या भवन सोसायटी के नाम से बनवाएं।

प्रकाशक : विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर और अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बैंगलूरू का संयुक्त प्रकाशन
मुद्रण : संजय प्रिन्टर्स, उदयपुर

संपादकीय

ज़रूरत है बुनियादी शिक्षा को समझने की

इसे विडंबना ही कहें कि आज़ादी के इतने वर्षों बाद भी हम अपने देश के लिए शिक्षा का विकल्प नहीं ढूंढ़ पाए हैं। आज भी हम अनुभव कर रहे हैं कि हमारी शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है। यह कुछ हद तक सही भी है क्योंकि आज की शिक्षा विद्यार्थी को व्यावहारिक जीवन से दूर ले जा रही है। वे मात्र पढ़कर ज्ञान प्राप्त करना जानते हैं। दरअसल, आज का माहौल कुछ इस प्रकार का बना हुआ है, जो विद्यार्थियों को सीखने–सिखाने की प्रक्रिया और अपने ही समाज से जुदा करता है। शिक्षा के बेहतर विकल्प के लिए हमें बुनियादी शिक्षा की ओर झांकना पड़ेगा। बुनियादी शिक्षा क्या है, क्यों यह शिक्षा की मुख्य धारा बने, और किन परिवर्तनों के साथ बने, इसे कैसे अपनाएं, जैसे मसलों पर हमें अपनी समझ बनानी होगी।

इसके साथ ही हमें बुनियादी शिक्षा के संवाद को आज के वैश्वीकरण और उदारीकरण के संदर्भ में देखना होगा। इसके अन्तर्गत हाशियाकृत बच्चों की शिक्षा, शिक्षा के सामाजिक सरोकार आदि पर भी गहराई से सोच–विचार करना होगा। इसी परिप्रेक्ष्य में कक्षा–कक्ष की प्रक्रियाओं व शिक्षक प्रशिक्षणों पर पुनर्विचार और सवाल उठाकर उन्हें बेहतर बनाने के लिए सार्थक प्रयास करने होंगे।

बुनियादी तालीम के क्षेत्र में विद्या भवन का काफी लंबा अनुभव रहा है। विद्या भवन पिछले 14–15 वर्षों से बेसिक स्कूल के माध्यम से बुनियादी तालीम के विचार और उसके शिक्षा शास्त्र को आज के संदर्भ में समझने और उसे पुनः अपनाने की दिशा में गहन चिंतन और कार्य कर रहा है। इस प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए इस पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है ताकि देश में ओर जगह बुनियादी शिक्षा या बेहतर शिक्षा के संदर्भ में किए जा रहे कार्य और उसके अनुभवों को आपस में बांटने के साथ बुनियादी तालीम पर शिक्षाविदों को विमर्श का एक मंच प्रदान किया जा सके।

पत्रिका का यह भी प्रयास रहेगा कि शिक्षक बंधु और शिक्षा में कार्यरत संस्थाएं व साथी इस पत्रिका के सदस्य बनें और इन्हें पढ़कर अपने विचारों का आपस में आदान–प्रदान करें।

पत्रिका का यह अंक आपको कैसा लगा? आप इस सामग्री का इस्तेमाल किस रूप में कर सकते हैं, कौनसी सामग्री आपको बढ़िया लगी, आपकी इस पत्रिका से क्या अपेक्षाएं हैं, उन्हें लिखकर हमें भेजें।

विशेष

*बुनियादी शिक्षा : एक नई कोशिश पत्रिका का भारत सरकार के समाचार पत्रों के पंजीयन कार्यालय (आर. एन.आई.) से पंजीयन कराने की प्रक्रिया में हमारे द्वारा वरीयता क्रम में प्रस्तुत किए पांच शीर्षकों में से आर.एन. आई. के द्वारा इसका शीर्षक **'शिक्षा की बुनियाद'** सत्यापित किया गया है। अतः अब यह पत्रिका इसी शीर्षक से जानी जाएगी। इस क्रम में इसका यह पहला अंक है। पत्रिका का स्वरूप पूर्ववत ही रहेगा।*

संपादक मण्डल

लेखकों, शिक्षकों एवं शिक्षा से जुड़े साथियों से एक अनुरोध

बुनियादी शिक्षा को आज हम शिक्षा के बुनियादी सवालों के संदर्भ में परिभाषित करने की कोशिश कर रहे हैं। हाशियाकृत समाज की समस्याएं व उनके सवाल, गांधीजी के विचारों में काफी शिद्दत के साथ प्रकट होते रहे हैं। इन बातों को आज के वैश्वीकरण, उदारीकरण के संदर्भ में देखने की कोशिश करनी चाहिए। हाशियाकृत बच्चों की शिक्षा के लिए शैक्षिक विचार, नीतियां, कक्षा के क्रियाकलाप आदि मुख्यधारा के शैक्षिक विमर्श का हिस्सा कैसे बनें? इन बातों को ध्यान में रखकर इस पत्रिका का खाका खींचा गया है। आपसे अनुरोध है कि निम्न बिंदुओं को ध्यान में रखकर शिक्षा के बुनियादी सवालों पर सामग्री प्रेषित करें–

- आज के संदर्भ में बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता, बुनियादी शिक्षा का ऐतिहासिक परिदृश्य, अनुभव, मुद्दे आदि।
- शिक्षा के बुनियादी सवाल, स्कूल के बुनियादी सवाल, कक्षा के क्रियाकलाप, अनुभव आदि।
- बुनियादी शिक्षा का दर्शन व उसका विश्लेषण, अन्य शैक्षिक दर्शनों के साथ तुलना आदि।
- बुनियादी शिक्षा के तत्त्वों पर आधारित वर्कशीट्स, गतिविधियां, कक्षा कार्य आदि का प्रस्तुतीकरण।
- शैक्षिक पुस्तकों की समीक्षा।
- शिक्षक डायरी

आशा करते हैं कि आप बुनियादी शिक्षा के इस विमर्श से जुड़कर इसमें अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देंगे।

लेख कैसे भेजें :

- रचनाएं कृति देव या देवली लिपि में टाइप करवाकर या हाथ से लिखकर भेजे जा सकते हैं।
- पत्रिका के लिए लेख सीधे ई–मेल के माध्यम से भेज सकते हैं।
- लेख में संदर्भों का उल्लेख करें तो बेहतर होगा।

ईमेल
vbs@yahoo.com
girish@vidyabhawan.org
डाक/कुरिअर से निम्न पते पर भेज सकते हैं :
भागचंद्र कुमावत/गिरीश शर्मा
विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केंद्र
फतेहपुरा, मोहनसिंह मेहता मार्ग, उदयपुर, राजस्थान 313004

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

नई तालीम की कहानी : जो देखा-समझा

मार्जोरी साइक्स

नई तालीम पर केंद्रित सेवाग्राम प्रयोग की यह कथा एक ऐसी महिला द्वारा लिखी गई है जो रक्त और जन्म के आधार पर अंग्रेज है और उस राष्ट्र की सदस्य है जिसके औपनिवेशिक शासन को सेवाग्राम से ही चुनौती दी जा रही थी। वह एक शिक्षक तो है परंतु उसी ''पश्चिमी'' शिक्षा तंत्र द्वारा शिक्षित है जिसे गांधीजी अंग्रेजी शासन को बनाए रखने के लिए आंशिक तौर पर जिम्मेदार मानते थे। एक ऐसी महिला जिसने भारत में अपने पहले 10 साल मद्रास के एक निजी स्कूल में गुजारे जो सरकारी ''सहायता'' प्राप्त स्कूल होने के नाते कई अहम अर्थों में सरकारी तंत्र से बंधा हुआ था। फिर ऐसा कैसे हुआ कि यह अंग्रेज अध्यापिका सेवाग्राम प्रयोग से बिल्कुल शुरुआती दौर में ही आ जुड़ी? मार्जोरी साइक्स एक अंग्रेजी महिला थीं जो गांधी से एक अरसे के बाद मिली। उन्होंने शिक्षा के गुर अपने पिताजी से सीखे जो एक असाधारण शिक्षक थे। कार्यकेन्द्रित शिक्षा, मातृभाषा में शिक्षा जैसे मसलों पर उन्होंने गुलाम भारत में रहते हुए अनेक कार्य किए। इस अंक में मार्जोरी साइक्स के शिक्षा के अनुभवों को किश्तवार प्रकाशित किया जा रहा है इस कड़ी में पढ़िए पहला लेख मार्जोरी की जुबानी।

मद्रास में 1937 की अगस्त का वह दिन भी स्कूल के सामान्य कामकाजी दिनों की तरह ही शुरू हुआ था। मुझे भी कक्षाएं लेनी थीं और कार्यालय के कामकाज निपटाने थे। जब डाक आई तो सबके निजी पत्र बाद में पढ़ने के लिए अलग रख दिए गए। दोपहर के भोजन के बाद मैं अपने कमरे में गई और उन्हें साथ लेती गई। उनमें *हरिजन* की 31 जुलाई की मेरी प्रति भी थी। मैं उसके पन्नों को पलटने लगी। तभी मेरी नजर एक पैराग्राफ पर अटक गई : भारत के बच्चों को गांधीजी जैसी शिक्षा देना चाहते थे, उसके बारे में उन्होंने एक सार्वजनिक ब्यौरा प्रकाशित किया था। उन चंद पंक्तियों ने मेरे दिमाग से बाकी सारी बातों को बाहर कर दिया। मैंने उन पंक्तियों को बार–बार पढ़ा। मैं आज भी उन शब्दों को साफ–साफ याद कर सकती हूं, जो उस पैराग्राफ को पढ़ने के बाद मेरे दिमाग में आए थे – आखिरकार कोई तो है जो शिक्षा के बारे में कायदे की बात कह रहा है! मैं उत्सुकता से अगले और फिर उससे अगले हरिजन की प्रतीक्षा करने लगी। मैं गांधीजी के प्रस्तावों से पैदा हो रहे विवादों में भी दिलचस्पी लेने लगी। इसी दौरान मुझे पता चला कि अक्टूबर में कुछ चुने हुए शिक्षाशास्त्रियों को प्रारंभिक चर्चा के लिए बुलाया जा रहा है। तब तक मैं गाांधीजी से नहीं मिली थी। मैं युवा और संकोची थी और दक्षिण भारत के बाहर भारत के बारे में कुछ भी नहीं जानती थी। इसलिए अपने उत्साह के बावजूद मुझे कभी लगा ही नहीं कि मैं

भी उस बैठक में जा सकती हूं। अब मुझे समझ में आता है कि अगर मैं वहां जाती तो मेरा स्वागत ही होता पर अब मुझे कोई अफसोस नहीं है। मेरे लिए चीजें कुछ दूसरे तरह से घटित हुईं।

गाांधीजी के विचारों के प्रति मेरा उत्साह शून्य से पैदा नहीं हुआ था। इसका संबंध मेरे बचपन के अनुभवों से था। जब मैं छोटी थी तो हम बच्चों से उम्मीद की जाती थी कि हम रोजमर्रा के घरेलू कामों में हाथ बंटाएं। हमें अपने सादगी भरे छोटे से घर की साफ–सफाई और भोजन बनाने में मदद करनी होती थी। मेरे पिता उत्तरी इंग्लैंड के एक निर्धन कोयला खनन इलाके के ग्रामीण स्कूल में प्रधानाध्यापक थे। उनका वेतन भी साधारण ही था। यह एक साधारण स्कूल था, लेकिन मेरे पिता कोई साधारण अध्यापक नहीं थे। वह जानते थे कि बच्चे कामों और चीजों को खुद करते–बनाते हुए ही सीखते हैं। उन बच्चों के कुछ करने एवं बनाने के लिए चीजें जुटाते–तैयार करते हुए वह शाम को घंटों लगे रहते थे। इस काम में मैं, उनकी सबसे बड़ी बेटी, उनकी सहायता करती थी। उन्होंने स्कूल के बच्चों को गत्ते के ऐसे मॉडल बनाना सिखाया जो सचमुच काम करते थे। कैसे करके दिखाया कि कैसे रेलवे सिगनल बनाए जा सकते हैं जो ऊपर–नीचे हो सकें, कैसे पनचक्की तैयार करें। पनचक्की के लिए वे पानी की जगह महीन बालू का इस्तेमाल करते थे क्योंकि गत्ते की चक्की पर पानी नहीं डाला जा सकता था। इसी तरह उन्होंने गणित और विज्ञान के सबक पढ़ाए। साथ ही शारीरिक कौशल और सफाई से काम करने की सीख दी गई। भूगोल, इतिहास, काव्य और संगीत को भी बच्चों के अनुभवों के साथ जोड़ कर सिखाया गया। एक बार कनाडा में रह चुके एक सहायक अध्यापक पधारे जो सोख्ता कागज पर चिंगारी से आग लगाना जानते थे। पिता जी ने फौरन ही इस प्रयोग के लिए भी इंतजाम कर दिया और उसके बाद सारे बच्चों को भी खुद ये तरकीब आजमाने का मौका दिया। जब 1928 में मैंने मद्रास में पढ़ाना शुरू किया तो मैंने अपने पिता से कहा कि वे कोई ऐसी गाइड–बुक भेज दे जिसमें रोजमर्रा की वस्तुओं का उपयोग करते हुए प्रायोगिक गतिविधियों के जरिए सामान्य विज्ञान पढ़ाने के बारे में बताया गया हो। उन्होंने जल्दी ही मुझे कुछ किताबें भेज दीं। इन पुस्तकों से मुझे आने वाले समय में मद्रास में बहुत सारे सबक तैयार करने में बड़ी सहूलियत मिली। यह भारत के शैक्षणिक दायरे में स्थानीय संसाधनों के उपयोग का फैशन आने से 40–50 साल पहले की बात है। बाद में सेवाग्राम के मेरे विद्यार्थी जब–तब मुझसे पूछ ही बैठते थे कि मैंने नई तालीम का प्रशिक्षण कहां से लिया था। मेरा जवाब होता, अपने घर में, अपने माता–पिता से। जब मैं स्कूल में पढ़ रही थी उन दिनों तक मुझे गांधीजी के बारे में कुछ भी पता नहीं था। 1920–21 में भी हमें भारत में चल रहे असहयोग आंदोलन की भी कोई जानकारी नहीं थी। हां, हमें आयरलैंड के स्वतंत्रता आंदोलन के बारे में खूब जानकारी थी और उस संघर्ष में हमारी सहानुभूति आयरिश जनता के साथ थी। औपनिवेशिक जनता द्वारा अपनी पहचान के लिए चलाए जा रहे संघर्षों में मेरी रुचि केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में और गहरी हुई जहां हमें भारतीय मित्रों से यहां के राष्ट्रीय आंदोलन और उसके नेताओं के बारे में पता चला। शिक्षा के क्षेत्र में सहायता के लिए भी उन दिनों अकसर अपीले सुनायी पड़ती रहती थीं। उनके नौजवान नेता ऐसे स्कूल खोलना चाहते थे जो उनकी संस्कृति के मूल्यों की रक्षा कर सकें और पश्चिम के बढ़ते

दबाव का मुकाबला करने में उनको मदद दें। वे चाहते थे कि ब्रिटिश अध्यापक समानता की दृष्टि से उनकी सहायता करें। मैं इन प्रस्तावों से काफी आकर्षित थी अध्यापक के तौर अपना प्रशिक्षण पूरा करने के तुरंत बाद मद्रास के एक स्कूल के संपर्क में आ गई जहां सहायता की जरूरत थी। 1928 के पतझड़ में मैं मद्रास पहुंची। बेंटिंक गर्ल्स हाई स्कूल की शुरुआत लार्ड विलियम बेंटिंक के जमाने में बहुत छोटे पैमाने से हुई थी। उसका नाम भी लार्ड बेंटिंक के नाम पर ही रखा गया था। 1937 में जब गांधी जी ने हरिजन में अपना ऐतिहासिक पैराग्राफ लिखा उस समय तक यह स्कूल अपने 100 साल पूरे कर चुका था। 1987 में जब नई तालीम की स्वर्ण जयंती मनायी जा रही थी उस समय यह स्कूल अपनी स्थापना के 150 वर्ष पूरे कर रहा था। जैसा कि मैं बता चुकी हूं, अपने पाठ्यक्रम और परीक्षाओं के मामले में यह स्कूल व्यवस्था का ही अंग था लेकिन कई अहम मामलों में यहां काफी आजादी भी थी। मेरे दो वरिष्ठ सहकर्मी 1928 में साबरमती और शांति निकेतन में रह चुके थे। वे गांधीजी व गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर से बहुत प्रभावित थे। इस तरह के प्रयासों का एक परिणाम ये निकला कि बेंटिंक स्कूल के बच्चे–बच्चियों ने जन गण मन गाना सीख लिया था। वे इसके राष्ट्रीय गान बनने से बहुत पहले ही इसे प्रसन्नता से गाने लगे थे। वे इसके कई पदों को अच्छी तरह समझने लगे थे। भारत की महान धार्मिक परंपराओं के बीच साहचर्य वाला पद उन्हें खासा पसंद था।

टैगोर ने कहा था कि बच्चों की शिक्षा में उनकी मातृभाषा का केन्द्रीय स्थान होना चाहिए। उनके इस कथन ने हमारे विश्वास को और मजबूती दी। हमारा स्कूल द्विभाषिक स्कूल था। वहां तमिल और तेलुगु, दोनों भाषाओं में शिक्षा दी जाती थी। हम इस बात का खयाल रखते थे कि दोनों भाषाओं को उचित सम्मान मिले। कभी–कभी हम मद्रास में चलने वाली राष्ट्रीय गतिविधियों में नेतृत्वकारी भूमिका निभाने वाली विशिष्ट महिलाओं को बुलाते थे ताकि बच्चों को उन महिलाओं के काम के बारे में पता चले। उन महिलाओं में से कई अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों से पढ़ी थीं। उनको अपनी मातृभाषा के बजाय अंग्रेजी में बोलना आसान लगता था। हमें उनको भी तमिल में बोलने के लिए समझाना पड़ता था। हम उनसे कहते, हम चाहते हैं कि आपकी बात सभी बच्चे समझें। सारे बच्चे आपकी अंग्रेजी नहीं समझते। कृपया तमिल में बोलिए और वे हमारी बात मानती थीं।

हमें बाद में पता चला कि गांधी जी भी मातृभाषा के इस्तेमाल पर जोर दे रहे थे। उन दिनों तो हम मुख्यतः उनकी देदीप्यमान ईमानदारी एवं सादगी के बारे में ही जानते थे। हमारा स्कूल गरीब था, अधिकतर बच्चे साधारण परिवारों के थे। मद्रास की जलवायु हमेशा गर्म रहती थी इसलिए फर्नीचर कम थे और बच्चे चप्पल शायद ही कभी पहनते थे। अध्यापक और बच्चे, सभी नंगे पैर रहते थे और फर्श पर ही घास से बनी चटाइयों पर सोते थे।

टिन की छोटी सी संदूकची में ही एक लड़की के सभी कपड़े और अन्य वस्तुएं आ जाती थीं। जब मैंने पहली बार सेवाग्राम की सादगी को देखा तो मुझे न आश्चर्य हुआ और न कुछ अनजाना सा लगा। यहां एक खास किस्म की अपनी शालीनता थी, अपना सौन्दर्य था। सेवाग्राम दक्षिण के ग्रामीण घरों और बच्चों की सादगी को अभिव्यक्त करता था। अभी मुझे मद्रास में आए ज्यादा हफ्ते नहीं हुए थे कि तभी सौभाग्यवश मेरी मुलाकात राजाजी से हुई। उन्होंने गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम

और उनकी प्रेरणा से चल रही राष्ट्र–निर्माण गतिविधियों के बारे में बताया। वे स्वयं इन गतिविधियों से गहरायी से जुड़े थे, खास तौर पर तिरुचेनगोड़ के अपने आश्रम से। इन बातों से प्रेरणा लेकर हम अध्यापक भी सोचने लगे कि स्कूल की लड़कियों को भावी भारत के योग्य नागरिक बनने में सहायता कर के अपने छोटे स्तर से ही राष्ट्र–निर्माण के लिए और क्या–क्या कर सकते हैं। बेंटिंक में कई बातें हमारे पक्ष में थीं। सबसे पहले तो ये कि हमारा स्कूल आजकल के हिसाब से छोटा था। किंडरगार्टन से लेकर स्कूल की फाइनल कक्षाओं तक कुल मिलाकर हमारे पास 350 बच्चे थे। हम ये सोचते थे और अब भी सोचते हैं कि यह सही संख्या थी। अध्यापक और बच्चे एक–दूसरे को जानते थे और एक–दूसरे का ध्यान रखते थे। हम इतने बड़े नहीं थे कि एक बड़े परिवार की तरह महसूस और व्यवहार करने की क्षमता ही खो दें। दूसरे, हमारा स्कूल क्रिश्चियन प्रबंधन की देख–रेख में चलता था परंतु किसी धर्म के साथ कोई भेदभाव नहीं था। सभी लड़कियों के लिए समान कायदे–कानून थे चाहे लड़की किसी भी धार्मिक पृष्ठभूमि या ऊंची या नीची जाति की हो। सबके साथ समान व्यवहार किया जाता था। स्कूल में ही रहने वाले बच्चे स्कूल के ही भोजनालय में भोजन करते थे और उसको चलाने में वे मदद करते थे। स्थानीय बच्चे दोपहर का भोजन लेकर आते थे और छायादार पेड़ों के नीचे घेरे में बैठ कर भोजन करते थे। सब बच्चों की तरह वे भी कभी–कभी सफाई करना भूल जाते थे। एक दोपहर को स्टाफ रूम से हमने देखा कि एक सीनियर ब्राह्मण लड़की कुछ लापरवाह जूनियर लड़कियों द्वारा छोड़ दी गई जूठी पत्तलों को विनम्र भाव से चुपचाप साफ कर रही है। पत्तल छोड़ कर गई लड़कियों में से कुछ निम्न जाति की भी थीं। हमने सोचा कि कम से कम इस लड़की ने तो गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम की भावना को समझ लिया है। बच्चों से उम्मीद की जाती थी कि वे अपनी कक्षाओं और स्कूल परिसर को साफ–सुथरा रखेंगे। इसके लिए कोई नौकर नहीं था। कुछ कक्षाएं साधारण फूंस से बनी होती थीं जिनमें काम करना बड़ा आनंददायक था। उन कक्षाओं में पढ़ने वाली लड़कियों ने ही चारों तरफ फूलों की क्यारियां बना रखी थीं और वे उनकी देखभाल करती थीं। यह सब कुछ सहकारिता से ही संभव था। इस सहकारिता की भावना को हमने जानबूझकर खेल–कूद और अकादमिक कार्यक्रमों में भर दिया था। शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम में हमारा उद्देश्य कुछ स्टार खिलाड़ियों को तैयार करना नहीं था। हम हर बच्ची को प्रोत्साहित करते थे ताकि वह अपना वह सर्वोत्तम प्रदर्शन कर सके। यानी हमारा प्रयास रहता था कि जिन बच्चों में जन्मजात प्रतिभा है वे अन्य बच्चों की सहायता करें। कक्षाओं में भी ऐसा ही था। हम सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले बच्चे को कोई अकादमिक पुरस्कार नहीं देते थे, बल्कि हम उन्हें अन्य बच्चों की सहायता, अपनी कड़ी मेहनत और दोस्ताना सहयोग से आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते थे, उन पर नजर रखते थे और धीमी प्रगति करने वाले बच्चों में भी सुधार आने पर उनकी प्रशंसा करते थे। अरे हां! लोगों ने हमसे कहा था कि पुरस्कारों की कृत्रिम प्रेरणा के बगैर बच्चे काम नहीं कर सकते। लेकिन ऐसा नहीं है। यदि कभी ऐसा लगता भी है तो केवल इसलिए कि जिस काम की हम बच्चों से उम्मीद रखते हैं उसमें उनकी कोई अंदरूनी रुचि नहीं होती है या फिर उनके लिए उसका कोई अर्थ ही नहीं होता है। कुछ मां–बाप ने हमारे रवैए का विरोध भी किया। उनका कहना था कि वे अपनी लड़कियों

को पढ़ने के लिए भेजते हैं फर्श साफ करने या क्यारियों में पानी देने के लिए नहीं। दूसरी ओर यह भी सच है कि एक सहायता प्राप्त स्कूल की सीमाओं के भीतर हम जो कुछ भी कर रहे थे उसकी वजह से ही कुछ मां–बाप अपनी लड़कियों को जानबूझकर हमारे पास भेजते थे। ऐसे अभिभावकों में कई शहर के राष्ट्रीय नेता भी शामिल थे। लेकिन हम जो कर सकते थे उसकी भी एक सीमा थी और 1935 के आसपास से मैं इस बारे में ज्यादा असहज रहने लगी थी। एक बात ये थी कि गांधी जी इस बात से बहुत परेशान थे कि शिक्षा के लिए पैसा एक हद तक शराब की लाइसेंसशुदा दुकानों से आ रहा था। एक अन्य तथ्य जो मुझे परेशान करता था वह भारत की वास्तविक जरूरतों के संदर्भ में व्यवस्था के अप्रासंगिक होने के प्रति मेरी बढ़ती जागरुकता थी। मुझे लगने लगा कि कुछ ऐसा है जो गहरे तौर पर गलत है। एक लड़की नर्स बनना चाहती थी। एक कॅरियर के हिसाब से उसका व्यक्तित्व एवं कौशल, सब कुछ नर्स बनने के लिए अनुकूल था। परंतु उसे प्रशिक्षण कोर्स में प्रवेश देने से मात्र इसलिए मना कर दिया गया क्योंकि वह अंग्रेजी व्याकरण जैसे औपचारिक एवं अप्रासंगिक विषय में पास नहीं हो पायी थी। मुझे एक परेशानी कम्युनल इलेक्टोरेट के लिए 1935 में किए गए प्रावधान से थी। सांप्रदायिक मतदान के राजनीतिक नतीजों के मद्देनजर धर्मांतरण का मुद्दा राजनीतिक रूप से विस्फोटक हो गया था। जैसा कि मैंने बताया, हमारा स्कूल एक क्रिश्चियन फाउंडेशन था। अब तक मैं सभी समुदायों की लड़कियों को बेहिचक बाइबिल पढ़ा लेती थी। बाइबिल में दिए गए सार्वजनिक न्याय एवं सदाचार के महान संदेशों को हम गांधी जी के विचारों और सामाजिक न्याय के परिप्रेक्ष्य में पढ़ते–समझते थे। लेकिन 1935 के बाद प्रत्येक साम्प्रदायिक संगठन; चाहे वह कितना भी खुला या ईमानदार हो प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से धर्म परिवर्तन के आरोपों में फंसने लगा। अब तक होने वाली खुली एवं सहज आपसी चर्चाओं पर संदेह की छाया मंडराने लगी। ऐसे सरकारी और अन्य दबावों को लेकर मैं काफी खिन्न थी। मैं हर पल ये चाहने लगी कि मुझे आजाद माहौल में काम करने की आजादी मिले। गांधी जी के सपनों और आशाओं के बारे में पढ़ने के बाद अगस्त के उस दिन से तो मेरी यह चाह और मजबूत हो गयी।

1938 में आगे का रास्ता खुलने लगा। अपने कुछ दोस्तों के माध्यम से मुझे रवीन्द्रनाथ टैगोर का गर्मजोशी भरा पत्र मिला जिसमें उन्होंने मुझसे आग्रह किया था कि मैं शांति निकेतन में काम करूं। मैंने यह आमंत्रण तुरंत स्वीकार कर लिया और 1938 के दिसम्बर में अपने भावी कामकाज को समझने–बूझने के इरादे से मैं शांति निकेतन के लिए निकल पड़ी। मैंने सीधा तटीय रास्ता नहीं चुना बल्कि पहले मैं वर्धा गयी। मैं अपनी आंखों से देखना चाहती थी कि वहां तथा गांव स्थित नए ग्रामीण स्कूल और शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र में क्या कुछ चल रहा है। वहां पहली बार मैं गांधी जी से मिली और उनके स्कूल एवं उसके आदर्शों के बारे में सीधे उनसे समझने का मौका मुझे मिला। इस बार मैं उनके विचारों से और ज्यादा प्रभावित हुई। उस दिसम्बर में मैंने जो कुछ देखा–जाना, वह आगे की कहानी का एक हिस्सा है।

अगले अंक में जारी...

साभार– नई तालीम की कहानी से,
मार्जोरी साइक्स, (1988), नई तालीम की कहानी, अनुवाद : श्री प्रकाश, क्षेत्रीय प्रारंभिक शिक्षा संसाधन केन्द्र, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

विश्लेषण

असफल नई तालीम नहीं, हम हुए

शिव दत्त

यह प्रश्न उठाना स्वाभाविक ही है कि जब नई तालीम शिक्षण योजना इतनी अच्छी थी, तो यह राष्ट्रीय शिक्षा का स्वरूप क्यों न ग्रहण कर सकी? इस प्रश्न पर विचार करने से पूर्व संक्षेप में नई तालीम के काम के संदर्भ में कुछ तथ्यों को जान लेना आवश्यक होगा। सबसे पहला, तथ्य है कि नई तालीम के काम में हमेशा ही दो धाराएं बहती रहीं। एक प्रकार का काम सरकार के द्वारा हुआ और दूसरी तरह का काम गैर सरकारी तौर पर हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम की मदद से हुआ। प्रारम्भ में नई तालीम की इन दोनों धाराओं में सहयोग रहा। लेकिन कांग्रेसी मंत्रिमंडलों के, 1939 के अंत में, त्यागपत्र देने के बाद यह मेल–मिलाप समाप्त हो गया और अन्ततः 1942 से 1946 तक तो यह सम्बन्ध बिल्कुल ही टूट गया। इससे अतिरिक्त, सरकारों ने कभी भी नई तालीम को समग्र रूप से नहीं अपनाया। बाद में जो सम्बन्ध जुड़ा भी, उसमें भी खींच–तान चलती रही। सरकारी शिक्षा विभाग अपनी तरह से नई तालीम की व्याख्या करते रहे और हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के नेतृत्व में गैर सरकारी स्तर पर नई तालीम का काम अलग तरह से चलता रहा, जहां नई तालीम को समग्र रूप में सिद्ध करने के प्रयास किए गए। सरकारी तालीम में, आमतौर पर कहा जाए तो नई तालीम के सिद्धांतों को पूरा का पूरा कभी भी स्वीकार नहीं किया गया था। हां, कुछ एक राज्यों में सरकारी काम अन्य प्रांतों से ज्यादा अच्छा हुआ। इसका कारण यह था कि उस समय वहां जो शिक्षा अधिकारी थे, वह नई तालीम के प्रतिबद्ध अधिक श्रद्धा थे।

इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि प्रारम्भ से ही नई तालीम के काम को विभिन्न प्रकार की प्रतिकूलताओं का सामना करना पड़ा। 1938 में प्रयोग प्रारम्भ होते ही एक वर्ष के अन्दर ही विश्वयुद्ध छिड़ गया, कांग्रेसी मंत्रिमंडलों ने त्याग पत्र दे दिया और 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ हो गया। इसके बाद 1942 में तो ''भारत छोड़ो'' आंदोलन का तूफान ही खड़ा हो गया। उस समय तो नई तालीम का काम लगभग बिल्कुल ही बंद हो गया। 1945–46 में जब यह पुनः व्यवस्थित हो रहा था, तो देश विभाजन व उसके बाद की घटनाओं ने भयंकर समस्या खड़ी कर दी और केन्द्र सरकार भयंकर आर्थिक संकट में फंस गई। इस सबसे उबरने में कुछ समय लगा और 1951–52 से 1955–56 तक नई तालीम का अच्छा विस्तार हुआ। परन्तु इसी समय देशभर में विनोबाजी द्वारा भूदान आंदोलन चलाया जा रहा था। देश के सभी रचनात्मक कार्यकर्ता इस काम में जुट गए और नई तालीम का काम गैर सरकारी स्तर पर भी कुछ धीमा हो गया। 1959 में तो हिन्दुस्तानी तालीमी संघ का ही विलय सर्व सेवा संघ में हो गया।

इस तरह जन्म के समय से ही नई तालीम को

तमाम तरह की विपरित परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। परन्तु यह अपने अन्तर्निहित गुणों व पद्धति की श्रेष्ठता के कारण न केवल अपने को बनाए रख सकी बल्कि अच्छे परिणाम भी देश के सामने रखने में सफल रही। शैक्षणिक एवं बच्चों के सर्वांगीण विकास के संदर्भ में तो सभी स्थानों में उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए थे। परन्तु फिर भी, जहां बात करिए, वहीं कहा जाता है कि नई तालीम का प्रयोग सफल नहीं हुआ। इस संदर्भ में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि सरकारी स्तर पर बिहार राज्य के काम का तथा गैर–सरकारी स्तर पर सेवाग्राम के काम का अवलोकन ही आंखें खोलने वाला होगा। कुछ लोग इसे एक प्रयोग ही मानते हैं। परन्तु आंकड़े कुछ और कहानी बयां करते हैं। वर्ष 1956 के दौरान सरकारी आंकड़ों के अनुसार देश के 27 राज्यों में कुल बुनियादी स्कूलों की संख्या लगभग 48 हजार थी, जिनमें 50 लाख से अधिक बच्चे शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। जिनमें, 5,600 से अधिक स्कूल शहरी क्षेत्रों में स्थित थे और इनमें 12 लाख 15 हजार से अधिक छात्र शिक्षण प्राप्त कर रहे थे। नई तालीम के काम में लगे कुल शिक्षकों की संख्या डेढ़ लाख से अधिक थी। इतने बड़े पैमाने पर चल रहे काम को, वह जैसा भी हो, कोई प्रयोग कैसे कह सकता है?

सरकारों ने, विशेषकर शिक्षण अधिकारियों एवं परंपरागत शिक्षकों ने नई तालीम का, निहित स्वार्थों के चलते, हमेशा ही विरोध किया। सरकारों की नीति कभी भी नई तालीम के संदर्भ में स्पष्ट नहीं रही। इन शिक्षण अधिकारियों ने प्रारम्भ से ही नई तालीम का स्वरूप बिगाड़ने में ही अपनी प्रतिभा व शक्ति का प्रयोग किया। नई तालीम के संदर्भ में यह भ्रामक प्रचार किया गया कि यह केवल गांवों व ग्रामीणों के लिये ही है, इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में ही अधिकांश स्कूल खोले गए, तथा शहरी तथा उच्च व मध्यमवर्गीय बच्चों के लिए तो पुराने स्कूल ही चलते रहे। इससे ग्रामीण जनता में भी भ्रम फैला, इसके साथ ही सरकार ने 8 साल की बुनियादी शिक्षा को 5 साल व 3 साल की शिक्षा में विभाजित कर दिया, जबकि हिन्दुस्तानी तालीमी संघ कहता रहा कि नई तालीम का विभाजन नहीं किया जा सकता। नई तालीम विद्यालयों को वह शिक्षण सामग्री या सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं कराई गईं जो उनके लिए अत्यावश्यक थीं। उत्पादित वस्तुओं की बिक्री की कोई व्यवस्था नहीं की गई और शिक्षकों को भी पूरी तरह प्रशिक्षित नहीं किया गया। समवाय और उत्पादकता के सिद्धान्त की प्रत्येक जगह अवहेलना की गयी। उच्च शिक्षा के दरवाज़ों को नई तालीम के छात्रों के लिए बंद–सा रखा गया और सबसे बड़ी बात यह कि सरकारी स्तर पर नई तालीम का काम उसके जीवन–दर्शन से अलग करके चलाया गया।

गांधीजी ने नई तालीम शिक्षण योजना को स्वावलंबी शिक्षण योजना के रूप में प्रस्तुत किया था, जिसके माध्यम से देश के सभी बच्चों को शिक्षा देना संभव होगा, क्योंकि आधुनिक शिक्षा व्यवस्था इतनी महंगी है कि इसके द्वारा सबको शिक्षित करना संभव ही नहीं है। परन्तु सरकारी शिक्षण अधिकारियों ने नई तालीम को इस तरह से लागू किया कि यह शिक्षण पद्धति अत्यन्त खर्चीली बताई जाने लगी और इन अधिकारियों ने अपनी जादुई तरीके और आंकड़ों के माध्यम से इस योजना को इस तरह प्रस्तुत किया कि सरकारें डर गईं कि इतनी महंगी शिक्षा पद्धति को वह कैसे चला सकती हैं?

इस तरह एक ओर तो सरकारी स्तर पर नई तालीम को पूरी तरह से अपनाया भी नहीं गया और वहीं दूसरी ओर उसका स्वरूप बिगाड़कर

बदनाम करने की क्रिया भी चलती रही। विनोबाजी ने इसे ही नई तालीम का ''वानरीकरण'' की संज्ञा दी थी। हो यह रहा था कि कहीं तो, जो कुछ शिक्षा चल रही थी उसमें ही उद्योग के रूप में एक विषय जोड़ दिया गया तथा यह मान लिया गया कि नई तालीम हो गई और कहीं–कहीं प्रचलित पाठ्यक्रम को ही ठीक उसी क्रम से नई तालीम पद्धति द्वारा पढ़ाने का प्रयास किया और उसमें असफल होने पर, जो कि होना ही था, नई तालीम को ही नकारा साबित किया गया।

नई तालीम को पूरी निष्ठा और लगन से चलाने के बजाय, बार–बार शिक्षा आयोग व समितियां ही गठित की जाती रहीं। इन सबका अंतिम परिणाम यह हुआ कि नई तालीम का दायरा बढ़ने के बदले सिकुड़ता ही गया। सन् 1956 में रामचंद्रन समिति ने देशभर के नई तालीम के काम का निरीक्षण करके, जो रिपोर्ट तैयार की थी, उससे स्पष्ट पता चलता है कि सरकारी ढांचे में रहकर, नई तालीम पनप नहीं सकी और सन् 1964 में गठित कोठारी आयोग की 1966 में रिपोर्ट प्रकाशित होने के बाद, नई तालीम सरकार की शिक्षा नीति से बिल्कुल ही हटा दी गयी। हां, शिक्षा में गांधीवादी मूल्यों को शामिल करने की बात अभी भी चलती रहती है, जैसे शिक्षा के पाठ्यक्रम पर विचार करने के लिए सन् 2005 में प्रो. यशपाल की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया था और उसने भी 'शिक्षा में काम' नामक एक ग्रुप गठित करके इतिश्री कर ली। उसमें नई तालीम का नाम अवश्य आ गया, पर पहले की ही तरह बोलबाला 'वर्क एक्सपीरियंस' का ही रहा।

गैर सरकारी स्तर पर जरूर कुछ अच्छा काम हुआ तथा तमाम प्रतिकूलताओं के बावजूद भी इन प्रयोगों ने नई तालीम के सच्चे स्वरूप को सिद्ध कर दिखाया। लेकिन अन्य बाहरी परिवर्तनों का असर इन पर पड़ना ही था, उस दबाव में आख़िर व कब तक टिकते। यह सभी प्रयोग या तो प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के अंग बन गए या फिर मिट गए। आज़ादी मिलने के बाद देश ने भविष्य का जो रास्ता चुना वह गांधी का रास्ता नहीं था, यह वही रास्ता था जिसका गांधीजी जीवन भर विरोध करते रहे थे। जब आधुनिक सभ्यता का ही बोलबाला रहने वाला हो, तो नई तालीम कैसे चल सकती है? इसलिए असफल नई तालीम नहीं, असफल तो हम लोग हुए हैं, राष्ट्र हुआ है।

गांधीजी नई तालीम को विस्तृत स्वरूप देकर उसे नवीन सामाजिक क्रान्ति का वाहन बनाना चाहते थे। वस्तुतः गांधीजी की कल्पना के अनुसार समग्र ग्राम आंदोलन के पूरक के रूप में ही, नई तालीम की प्रगति हो सकती थी। गांधीजी ने अपने जीवन के अंतिम दिन, इस तरह का संगठन बनाने की रूपरेखा तैयार कर ली थी, पर देश का दुर्भाग्य है कि वह इसे समझाने व लागू करने के लिए नहीं रहे। शायद इसी कारण विनोबाजी ने सर्व सेवा संघ में रचनात्मक कार्य की सभी संस्थाओं के विलय की बात कही थी और हिन्दुस्तानी तालीमी संघ का विलय सर्व सेवा संघ में हुआ भी, किन्तु उसके अपेक्षित परिणाम नहीं निकल पाए। इसका मुख्य कारण यह था कि उस समय तक भूदान, ग्रामदान आंदोलन अपने उतार पर आ गया था, अतः वह नई तालीम को पुनः जीवन नहीं दे सका।

संभवतः, 1950 के बाद गैर–सरकारी स्तर पर देशभर में तेज़ी से नई तालीम के, जो केन्द्र बने वे एकांगी हो गये और उनकी भी प्रगति रूक गई। इन केंद्रों द्वारा शिक्षा में अहिंसक क्रांति की कोई संयोजित चेष्टा तो हुई नहीं, बल्कि विभिन्न नई तालीम विद्यालयों की चारदीवारी के भीतर शिक्षण

कला की नई प्रणाली के प्रयोग मात्र में ही, उनकी शक्ति केन्द्रित हो गई। यहां तक कि इस शिक्षा के माध्यम के रूप में सामाजिक वातावरण का इस्तेमाल भी व्यापक न होकर संस्थाओं के आंतरिक समाज तक ही सीमित रह गया। रचनात्मक कार्य की क्रांतिकारी दिशा में अपना रूप परितर्वन न कर सकने के कारण, नई तालीम की गैर सरकारी संस्थाएं भी आम जनता का ध्यान आकर्षित नहीं कर सकीं। नतीज़ा यह हुआ कि उनमें से अधिकांश धीरे–धीरे सरकारी 'एज्यूकेशन' के शिक्षक तैयार करने के केन्द्र बन गईं। इस प्रकार नई तालीम सामान्य शिक्षण कला के क्षेत्र में अवरूद्ध होकर गतिहीन हो गई।

अब सवाल है नई तालीम के भविष्य का। देश की आज की परिस्थितियों को देखकर लगता है कि जिस शिक्षा दृष्टि को लेकर और जैसा कार्यक्रम बनाकर गांधीजी ने देश के नवयुवकों और सभी देश–प्रेमियों के सामने जिस संदर्भ में रखा था, वह लगभग उसी रूप में आज हमें चुनौती दे रहा है। तब भारत की स्वतंत्रता का प्रश्न, मुख्य प्रश्न बनकर उपस्थित हुआ था, आज भारतीय की आजादी का संकट पहली समस्या बन गई है। बात वही है और शायद हल भी कुछ उसी प्रकार का हो सकता है। आज का दौर पहले से कठिन है, यह भी सच है। आज राष्ट्रीय आकांक्षाएं पाश्चात्य मॉडल की, सुरक्षा का नजरिया विदेशी, संस्कृति आकांक्षाएं यूरोपियन, अमरीकी हो गई हैं। आज तो ऐसा दिखता है, विशेषकर पढ़े–लिखे लोगों में कि जैसे अपना कुछ भी ठीक नहीं है। सब कुछ यूरोप या अमेरिका जैसा हो जाए, यही कामनाएं उनके मन को घेरे रहती हैं। भयानक संकट है यह, कुछ मायने में बड़ा ही डरावना।

परन्तु जैसाकि कहावत है कि जब अंधेरा बहुत घना हो, तो समझना चाहिए कि सुबह होने वाली है, ठीक यही बात नई तालीम के संदर्भ में भी कही जा सकती है। आज प्रचलित शिक्षा की दुर्दशा के बावजूद ऐसा नहीं लगता कि समाज के कर्णधारों, शिक्षकों, छात्रों और उनके संरक्षकों में शिक्षा में परिवर्तन के लिए कोई वास्तविक उत्साह है। परन्तु समाज में शिक्षा को लेकर एक अजीब तरह की बेचैनी अवश्य है, पर शुरुआत कहां से हो और कौन करे, यह किसी के समझ में नही आ रहा है। एक तरह की विकल्पहीनता की सी स्थिति समाज में, कम से कम शिक्षा के क्षेत्र में तो दिखती ही है।

यह स्थिति नई तालीम के लिए अनुकूल है और इसका सहारा लेकर कम से कम प्रौढ़ शिक्षा, अर्थात गांवों, कस्बों व शहरों में 15 वर्ष से ऊपर की आयु के बेरोजगार नवयुवकों की शिक्षा से नई तालीम का काम तो तुरंत ही प्रारम्भ किया जा सकता है। इसी तरह प्री–प्राइमरी स्तर से भी, गांवों, शहरों, दोनों में नई तालीम का काम नए सिरे से शुरू कर सकते हैं। इससे नई तालीम के पक्ष में जनमत बनाने के साथ ही साथ प्रचलित विद्यालयों में नई तालीम के विचार शामिल करवाने के लिए अनुकूल वातावरण भी तैयार होगा। सरकार से नई तालीम शिक्षण को स्वीकृत कराने के लिए, जनमत का इसके पक्ष में होना एक आवश्यक शर्त है।

इसके लिए देशभर में जो भी वैकल्पिक शिक्षा के प्रयोग चल रहे हैं उनसे संपर्क कर, उन्हें भी एक सूत्र में बांधने का काम, एक आवश्यक कार्य होगा। नई तालीम के विचार का प्रचार भी बड़े पैमाने पर करने की आवश्यकता है, हां, आधुनिक प्रचार माध्यमों का सहारा लेकर भी। आज नई तालीम के प्रेमियों के समक्ष एकमात्र विकल्प वही है, जिसे गांधीजी ने 1920 के आसपास अपनाया था यानी अपने पैरों पर खड़ा होने का। और यह काम गांधीजी के उस सूत्र

को याद करके करना होगा, जिसमें उन्होंने कहा था कि नई तालीम वही है जो देश के जरूरी व महत्वपूर्ण प्रश्नों का जवाब दे।

एक बात तो एकदम स्पष्ट है कि सन् 2010 की नई तालीम सन् 1950 या 1956 की नई तालीम की हूबहू नकल नहीं होगी। तत्व व तंत्र में अंतर समझते हुए, तत्व तो नई तालीम के वैसे ही बने रहेंगे परन्तु तंत्र को आज की परिस्थिति के अनुरूप ढालने होंगे। विनोबाजी ने कहा ही है 'नित्य नई तालीम'। संभव है, हमें मूलोद्योग के प्रश्न नए ढंग से सोचने पड़ें। टेक्नालॉजी के प्रश्न को भी संतोषजनक ढंग से हल करना होगा। ''अप्रोप्रिएट टेक्नालॉजी'' के तमाम प्रयोग करने होंगे। शहर व गांव में अब भेद नहीं कर सकते। ऐसे ही अन्य तमाम प्रश्नों के, वर्तमान परिस्थिति व समय को ध्यान में रखते हुए, हल ढूंढ़ने होंगे। इसके लिए शोध, अध्ययन व प्रयोग करना होगा।

उपरोक्त प्रकार से यदि देश के प्रमुख भाषाई क्षेत्रों में कम से कम एक–एक सेवाग्राम जैसा नई तालीम का केन्द्र स्थापित किया जाता है, तो वह उस भाषा क्षेत्र में नई तालीम के ''प्रकाश स्तम्भ'' का काम कर सकता है। ऐसे केन्द्रों में शिक्षण के साथ शिक्षकों का प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम सुधार तथा अध्ययन–अध्यापन पद्धति के क्षेत्र में शोध का काम भी किया जाए, तो नई तालीम के लिए सुनहरे भविष्य का रास्ता खुल सकता है। पिछले अनुभवों से सीख लेकर यदि पूर्ण निष्ठा से पुनः कार्य आरम्भ किया जाए तो कोई कारण नहीं कि नई तालीम अपने वास्तविक स्थान को न प्राप्त कर सके।

यह सच है कि आज के दौर में नई तालीम का काम पहले से ज्यादा कठिन है। परन्तु बड़े काम आसान भी नहीं होते।

सेवाग्राम, वर्धा में कार्यरत, समग्र नई तालीम व नई तालीम : प्रयोग और प्रसार को लेकर निरंतर लेखन में संलग्न।

नन्हा मदरसे चला

डा. जाकिर हुसैन

लीजिए, अब आपका नन्हा मदरसे चला। आदमी का बच्चा शुरू–शुरू में ऐसा बेबस होता है, और बड़ा होकर मानवता के जिस स्तर पर उसे पहुंचाना होता है, वह इतना ऊंचा है कि उसकी शिक्षा में बहुत दिन लगते हैं, और उसके विकास के लिए बड़े यत्न करने पड़ते हैं। इस शिक्षा और विकास के काम में आप, यानी नन्हें के मां–बाप, अभिभावक, अकेले जो कुछ कर सकते थे कर चुके। अब शायद आप समझते हैं कि काम केवल आप से न संभलेगा। इसमें औरों की मदद की जरूरत है। इसलिए नन्हा मदरसे भेजा जाता है। लेकिन शिक्षा और विकास का काम ऐसा मिला–जुला काम है कि अनेक प्रकार की शक्तियां सभी ओर से सिमट कर बच्चे के व्यक्तित्व में इस तरह घुल–मिल जाती हैं, कि उन्हें अलग–अलग करना कठिन है। मदरसा जब इस काम को अपने सिर लेता है, तब तक घर बहुत कुछ बना–बिगाड़ चुकता है। फिर मदरसे के सुपुर्द होने के बाद भी घर का प्रभाव मिट नहीं जाता। या तो घर और मदरसा साथ–साथ चलते हैं, और एक–दूसरे के काम को समझ कर हाथ बढ़ाते हैं, या वह एक तरफ खींचता है, दूसरी तरफ उसकी ढोलकी अलग और इसका राग अलग।

अब जो नन्हा मदरसे चला, तो देखना यह है, कि आप यानी मां–बाप और अभिभावक इसे पहले से क्या बना चुके हैं। मगर आप न जाने क्या–क्या हो सकते हैं। हो सकता है, कि आप उन अभागों में हों, जिनके पास दूसरों का कमाया हुआ धन

इतना होता है कि समझ में नहीं आता उसका करें क्या। धन की विपुलता का बोझ प्रायः अक्ल की कमी से हल्का होता है। क्या अजब है, कि उसका भार भी कुछ इसी तरह हल्का हुआ हो। अगर ऐसा है, तो अनुमान यही है, कि आपने नन्हें के विकास का कर्तव्य धन–व्यय करके पूरा करना चाहा होगा। नन्हें के लिए अनगिनत, बेकार नौकर होंगे और बेजरूरत सामान। तरह–तरह के कपड़ों के बक्स भरे होंगे, लेकिन शायद ही कोई पोशाक इस बच्चे के लिए उपयुक्त होगी। जूतों की लम्बी कतारें होंगी और नन्हा अक्सर नंगे पैर रहता होगा। खिलौनों का एक अजायब–घर होगा, जिनसे बच्चा कभी का उकता चुका होगा। यह नौकरों पर आपकी नकल करके बेजा हकूमत जताता होगा। घर में लाड़–प्यार करने वाली दादी और नानी होंगी, तो उन्हें खुश करने के लिए जब–जब आपको भी कुछ उल्टा–सीधा सुना देता होगा। अपने हाथ–पांव से काम करने की नौबत मुश्किल से ही कभी आती होगी, क्योंकि यह बड़प्पन की शान के खिलाफ है। बस, खाना खुद हजम करना होता होगा, अभिमानी होगा और अब यह मदरसे जाएगा। आपके किसी दोस्त ने बताया होगा, कि अमुक मदरसे में भेजो, वहां फीस ज्यादा है, इसलिए मदरसा जरूर अच्छा होगा। आपको अगर फुर्सत मिली होगी, तो एक ख़त अंग्रेज़ी में हेडमास्टर ने नाम लिख दिया होगा, और कुंवर साहब दो–तीन नौकरों और एक–दो धायों के साथ आप की बड़ी मोटर में बैठकर मदरसे में पधारे होंगे।

अगर नानी–अम्मा ने एक हफ्ते के अन्दर–अन्दर बच्चे को मदरसे से न उठा लिया, तो सच मानिए कि मदरसा आपके किए को अनकिया किए बिना अपना कर्त्तव्य मुश्किल से पूरा कर सकेगा, और फिर न मालूम कि घर कहां–कहां मदरसे की राह में रूकावट बनें?

हो सकता है, कि आप उन स्वावलम्बी मनुष्यों में से हों, जो अपने परिश्रम और योग्यता से आगे बढ़कर अपने पेशे या कारोबार में विशेष महत्त्व प्राप्त करते हैं, या किसी ऊंचे सरकारी पद पर पहुंच जाते हैं। आपको अवश्य यह चिन्ता होगी कि अपने बच्चे को अपने से और अच्छी शिक्षा दें। लेकिन आपको खुद इतनी कम फुर्सत होगी कि उसकी देखभाल कोई दूसरा ही करता होगा। लेकिन जिस तरह आप अधिक व्यस्त रहते हुए भी जीवन के सभी प्रधान क्षेत्रों–धर्म, अर्थनीति, राजनीति के सम्बन्ध में बस अंतिम निर्णय करना और उनका प्रचार अपने अल्पज्ञ और थोड़ी पूंजीवाले साथियों में करना आवश्यक मानते हैं, और समझते हैं कि इससे अपने व्यस्त जीवन की एकांगी प्रवृत्ति में कुछ सीध पैदा करेंगे, उस तरह आप अपने बच्चों की ओर ध्यान न दे सकने की कमी को, इसके सम्बन्ध में और इसकी शिक्षा के साधनों के संबंध में, खेद है कि बिल्कुल अंतिम निर्णय पर पहुंच कर, पूरा करना चाहते हैं। आप क्योंकि एक सफल मनुष्य हैं, इसलिए अपनी दृष्टि में आप ही मनुष्यता के मानदण्ड (मयार) हैं। अगर आपकी दृष्टि में कहीं बच्चे का यह रूप अधिक ठीक जंचे कि वह आप ही की सहज क्षमताओं का स्वामी है, तो शायद आपकी राय यह होगी कि आपका बच्चा ''जीनियस'' प्रतिभा सम्पन्न है। इसकी समझ के क्या कहने, इसकी धारणा शक्ति का क्या पूछना। इसे दो कविताएं जबानी याद करा दी गयी हैं, जो आप अक्सर इस गरीब से अपने मित्रों के समाने पढ़वाते हैं। यह उन्हें एक खास ढंग से सिर हिला–हिलाकर और हाथ बढ़ा–बढ़ा कर सुनाता है। आपने स्वयं अत्यन्त कृपा करके किसी इतवार के दिन इसे अंग्रेज़ी के वाक्य रटा दिए हैं।

यह रटा हुआ भी इसे लोगों के सामने दुहाराना पड़ता है। और इन प्रदर्शनों के बाद आप अपने दोस्तों को यकीन दिलाते हैं कि यह लड़का तो जीनियस है, जीनियस! मगर आपको कौन बताए कि इस ऊंचे मानदण्ड के अनुसार तो सारे तोते और सारे बन्दर भी जीनियस हैं और अगर कहीं काम की अधिकता के कारण आपके रग–पुट्ठे कुछ कमजोर हो गए हैं, जिगर का काम भी कुछ खराब है और बदकिस्मती से बच्चे से कोई मन के विरूद्ध बात भी कई बार हो गयी है, क्योंकि ऐसी दशा में मन के विरूद्ध बात करने के लिए किसी बड़े हुनर की जरूरत नहीं, तो आप अपनी सहज–बुद्धि से इस ठीक नतीजे पर भी पहुंच सकते हैं कि वह गधा है! अपनी दूसरी रायों की तरह आप अपनी इस राय का भी वक्त–बे–वक्त ऐलान करते होंगे, और आदमी के इस बच्चे को गधा बनाने में अपने बस–भर तो कसर उठा न रखते होंगे। और अब आपका यह जीनियस या आपका यह गधा अपने साथ बड़प्पन या मिथ्यानुमान (सुपीरिअरिटी काम्प्लेक्स) या उससे भी अधिक हीनता का मिथ्याभाव (इनफीरिअरिटी काम्प्लेक्स) लेकर मदरसे जाता है। देखिए, मदरसा आपकी पैदा की हुई उलझनों को किस तरह सुलझाता है, और आपका हस्तक्षेप करना वहां भी कहीं और गुत्थियां तो नहीं डालता? शायद आपका हरदम अपने काम में लगा रहना ही मदरसे का अपना काम करने दे और आपका जीनियस या गधा आदमी बन जाय।

लेकिन संभव है, कि न आप अतुल धन–दौलत के उत्तराधिकारी हों, न दिन–रात कमाई के सफल संघर्ष में लीन। बल्कि साधारण कोटि के ठीक भले–मानस हों। अपनी दूकान रखते हों, किसी दफ्तर में सौ–सवा के नौकर हों, किसी मदरसे में अध्यापक हों, रोज कुछ समय अपने बच्चों में बिता सकते हों, घर का काम आपकी पत्नी आप संभालती हो, नौकर चाकर न हों, सभ्य और योग्य पत्नी घर को साफ–सुथारा रखती हो, और बच्चों की भी देखभाल करती हो तो आपका बच्चा बहुत से उन खतरों से सुरक्षित हैं, जिनकी चर्चा अभी कर चुका हूं। मगर बच्चा फिर भी बच्चा है! कभी अधिक साफ–सुथरे घर में कहीं कुछ गिरा देगा, धुली चांदनी मैली हो जाएगी, मां जो रोटी थपानी में लगी है उसे देखकर नाराज होगी और कहेगी, ''अच्छा आने दे बाबूजी को अपने, कल ही तुझे मदरसे न भिजवाया तो।'' कभी बच्चे से कोई चीज़ टूट जाएगी– वहीं मदरसे की धमकी! कभी खेल–कूद में बच्चा चिल्लाएगा– शोर मचाएगा, अभी कपड़े बदले गए थे अभी धूल में सना मां के सामने आएगा, तो वही मदरसे भेजने की धमकी दी जाएगी। धमकी का प्रभाव बढ़ाने के लिए मदरसे की बड़ी भयानक तस्वीर भी सामने लायी जाएगी। और यों आज के दिन के लिए क्या ही खूब तैयारी की गयी होगी, इसलिए कि आज आप का नन्हा मदरसे चला!

या हो सकता है कि आप हिन्दुस्तान के उन करोड़ों किसानों और मजदूरों में से हो, जिनके बच्चों के लिए बस घर का कठिन जीवन ही मदरसे का काम देता है। जिनके लिए मदरसे खोलने को कभी काफी पैसे नहीं मिल पाते और जिनके बच्चों को शिक्षा दिलाने के लिए इतने मदरसों की जरूरत है, कि हर एक शिक्षा–विशेषज्ञ उंगलियों पर हिसाब लगाकर बता देता है कि इतने मदरसे खोलने के लिए जितने धन की जरूरत है, उतना तो मिल ही नहीं सकता वे यह बात बताकर समझते हैं कि बड़ी दूर की कौड़ी लाए। फिर इन सब कठिनाइयों के होते हुए भी

अगर कुछ मदरसे इनके लिए बन जाते हैं, तो ये अपने बच्चों को इन मदरसों में भेजने को तैयार नहीं होते। मैंने यह गलत कहा कि आप शायद उन करोड़ों किसानों या मजदूरों में से हों। उन बेचारों को इतना समय कहां कि बेफिक्रों की तरह रेडियो पर भाषण सुनें। कहीं–कहीं शिक्षा के अनिवार्य हो जाने के कारण, कहीं इसके निःशुल्क हो जाने के लालच से, कहीं आस–पास के संपन्न लोगों की देखा–देखी ऐसे किसान या मजदूर का नन्हा भी पढ़ने के लिए बैठा दिया जाता है। वह नन्हा जो घर के कामों में मां–बाप का हाथ बंटाता है, जो बकरियां चरा लेता है, खेत पर बाप के लिए रोटी ले जाता है, मां जब उपले थापती या रोटी बनाती है तो वह छोटी बहन को बहला लेता है। हाथ पांव का बड़ा मजबूत है, बस आंखें दुखती हैं, या नाक बहती है। लेकिन आंख मिला कर बात करता है, बे–सहारे जिंदा रह सकता है, आदमी का बच्चा हैं, कोई मुरमुरों का थैला नहीं, और, हां न यह जीनियस है– न गधा। मगर इसका बाप भी चाहता है कि बच्चा पढ़कर पटवारी बन जाय। यह न हो सके तो लाल–पगड़ी वाला चपरासी ही सही। अनिवार्य शिक्षा का कानून इसके जिले के कुछ गांवों में लागू हो गया है, इसलिए यह भी आज मदरसे जाता है।

अब आप ही देखिये कि कैसे भांति–भांति के बच्चे मदरसे जाते हैं। घर ने कैसे–कैसे नमूने बनाये हैं, क्या क्या आशाएं लगी हैं, और उन्हें पूरा करने का क्या उपाय है? मां–बाप की मानसिक उलझन को देखिये, उनके नतीजे यानी बच्चों की मानसिक गुत्थियों पर ध्यान दीजिए– तो मालूम होता है कि मदरसे का काम भी कितना कठिन हैं? लेकिन क्या मदरसे वाले इसे सचमुच कठिन समझते हैं? क्या उनका ध्यान अपने काम की इस कठिनता की ओर जाता है? उनकी ये कठिनाइयां तो सुनने में आई हैं कि वेतन कम है, काम बहुत है, अफसरों को सलाम झुकाने में या उसकी तदबीर में फुरसत का और कभी–कभी काम का भी बहुत वक्त निकल जाता है। छुट्टियां कम हैं, अफसर लोग पक्षपात से काम लेते हैं, और कहीं–कहीं तो महीनों तनख्वाह भी नहीं मिलती। ये सब और इन जैसी बहुत–सी शिकायतें सुनने में आती हैं, और प्रायः ठीक भी होती हैं। लेकिन शिक्षा और विकास के काम की वास्तविक कठिनाई तो और ही है। यह कठिनाई तो वहीं है, जिसके कारण घर में विकास संबंधी अनेक भूलें हो जाती हैं। यानी बड़ों का यह अभिमान कि वे ही सब कुछ हैं, बच्चा कुछ नहीं, वे सब कुछ जानते हैं, मंजिल जानते हैं, राह पहचानते हैं, सफर की गतिविधि निश्चय कर सकते हैं, काम उनकी इच्छा के अनुकूल हो, जिसकी अनेकरूपता के क्या कहने, तो सब ठीक! इसके खिलाफ हो, तो सब गलत! उन्हें घमण्ड है कि बच्चा उनकी सम्पति है, वे चाहे मनोरंजन के लिए उसे अपना खिलौना बनायें, चाहे अपने मनमाने उद्देश्यों के लिए अपना दास। उन्हें अपनी बाजीगरी का पूरा भरोसा है कि आम को इमली और इमली को आम बना सकते हैं। पहले बच्चा घर में लक्ष्य बनता है इस बात का कि वह सबकी संपत्ति है, और मां–बाप की सर्वज्ञता के दम्भ का। फिर कहीं मदरसे पहुंचता है। क्या मदरसा इसे इस मुसीबत से छुड़ा सकता है? क्या अध्यापक महोदय भी उस बीमारी के शिकार नहीं होते, जिसके कि स्वयं अभिभावक थे? क्या वे भी सब कुछ नहीं जानते और सब कुछ नहीं कर सकते? क्या वे भी यह नहीं समझते कि बच्चा उनके कुशलकरों में, बस, मिट्टी का एक लोंदा है? ये जो आकार चाहें उसे दें, और उसका मस्तिष्क जो कोरा कागज है, ये उसपर चाहे जो लिख दें। यारों ने तो शिक्षा के

विद्या–विषयक विचारों की पूरी इमारत ही इस गलत बुनियाद पर खड़ी कर ली हैं और शिक्षा की व्यवस्था बस इस अहितकर प्रयत्न से की जाती है कि प्रकृति जो चाहती है वह न होने पाये, या जो हम चाहते हैं– प्रकृति को भी वही चाहना चाहिए। प्रकृति तो हर बच्चे में व्यक्तित्व–निर्माण के अनगिनत साधनों में से किसी एक विशेष साधन की सफलता चाहती है। किसी ने ठीक ही कहा है, कि हर बच्चा जो पैदा होता है वह इस बात का प्रमाण है कि ईश्वर अभी मानव से निराश नहीं हुआ है और यहां पर यह धारणा बन चुकी है कि जो सांचा हमने तैयार किया है, बस वही सर्वश्रेष्ठ है। व्यक्तित्व के मोम में पिघला कर बस उसी में ढालना चाहिए और जो ठप्पा हमने बनाया है, वही सब से अच्छा है, उसी की छाप इस पर लगानी चाहिए। इस समय जबकि मैं बच्चों के अभिभावकों और उनके अध्यापकों को लक्ष्य करता हूं, यह निवेदन किए बिना नहीं रह सकता कि आप किसी तरह अपने को मौलिक भ्रांतियों से मुक्त कर लें, बच्चे को मनुष्य का अग्रदूत समझें, उसे बेसहारे खुद भी बढ़ने दें, उसकी प्राकृतिक क्षमताओं और प्रवृत्तियों का सम्मान करें और समझें कि यह छोटा–सा जीव अपने विकास की क्रियात्मक पूर्ति की ओर खुद कदम उठाता है। इसे सहारा दीजिये, मगर इसके चलने की दिशा तो न बदलिए। न इसकी ओर इतना अधिक ध्यान दीजिये कि वह फिर खुद अपनी ओर ध्यान ही न दे सके, न इनती उदासीनता ही रखिए कि इसकी वे आवश्यकताएं भी पूरी न हों– जिनमें यह सचमुच आपके अधीन है। न लाड़–प्यार की ज्यादती से इसे 'मिर्जा–फोया' बनाइये, न ऐसा ही, कि आप की कठोरता के कारण यह जिंदगी या कम से कम आदिमियों से ही घृणा करने लगे। मानसिक जीवन की अनेकरूपता को ध्यान में रखिये और यह विश्वास न कर बैठिए कि ऊंचे पदाधिकारियों या बड़े–बड़े वकीलों के सब बच्चों को ईश्वर खास तौर से गढ़ कर सिविल सर्विस के इम्तहान में बैठने के लिए ही दुनिया में भेजता है। सारांश यह है, कि उन संभावनाओं के कारण, जो आपके बच्चे के मानसिक जीवन में अभी छिपी हुई हैं, इन मान्यताओं के लिए जिनका वह भार उठा सकता है– आप उसका आदर और सत्कार करें। जी हां, आप घबरायें नहीं। मैंने यही कहा कि आप बच्चे का आदर और सम्मान करें। बेबस बच्चे से लेकर एक स्वतंत्र नैतिक व्यक्तित्व तक पहुंचने का प्रयत्न सचमुच बड़ा ही सराहनीय प्रयत्न है। आपने स्वयं चाहे उस राह पर कदम उठाना छोड़ दिया हो और थक कर कहीं बीच ही में बैठ रहे हों, कि बहुत से आदमियों को उस मंजिल तक पहुंचने का सौभाग्य नहीं मिल पाता, लेकिन आपका बच्चा अभी उस राह पर पहले पहल कदम उठा रहा है, उसका रास्ता तो न रोकिए, और भ्रम में कभी न पड़िए कि वह आपकी संपत्ति है, आप जो चाहें उसे बनायें। वह आपकी संपत्ति नहीं। वह तो आपके पास प्रकृति की एक धरोहर है। प्रकृति के अधिकार को अपने अधिकार से अधिक समझिए।

अध्यापकों से भी, जिनके मदरसे में ये बच्चे इसलिए भेजे जाते हैं कि समाज की दृष्टि में घर शिक्षा–विकास के कर्त्तव्य पूर्णरूप से पालन नहीं कर सकता, मेरी यह प्रार्थना है, कि आप भी अपने इस शुभ कार्य का मौलिक सिद्धान्त उसी आदर और सम्मान की भावना को बनायें। यह सिद्धान्त यदि आपके मस्तिष्क में बैठ गया, तो शिक्षा के काम में आपका सारा रवैया ही बदल जायगा। आप अपने साथियों को भेड़ों का समूह न समझेंगे, बल्कि उसमें हर बच्चे की विशेष क्षमताओं और मुख्य आवश्यकताओं का ध्यान रखेंगे। मैंने पारिवारिक

परिस्थिति के कारण बच्चों में जो भेद उत्पन्न हो जाते हैं, उनकी ओर संकेत किया है। आप अगर उन पर नजर रखेंगे तो जहां सहारे की जरूरत है वहां धक्का लग जाएगा, जहां हिम्मत बढ़ाने से काम बन सकता है, वहां आप मनमुटाव का कारण बन जाएंगे, जहां आपकी एक मुस्कुराहट से बच्चे के दिल की कली खिल सकती थी, वहां आपकी उपेक्षा से उसके मुरझाने का डर पैदा हो जाएगा। अगर बच्चे का आदर और सम्मान करना आपकी दृष्टि में एक उचित सिद्धान्त होगा, तो आप अपने छात्रों की मानसिक उलझनों को समझने की कोशिश करेंगे और हर एक के लिए उचित उपाय सोचेंगे। इन सामुदायिक भेदों के अतिरिक्त बच्चों की मानसिक आवश्यकताओं में जो विभिन्नताएं होती हैं उन पर भी आपकी दृष्टि रहेगी, तो आप कोशिश करेंगे कि जो प्रवृत्ति अधिक से अधिक बच्चों में हो उसी को समुदाय में भी शिक्षा का साधन बनायें। उदाहरण के लिए सात से बारह–चौदह वर्ष तक के बच्चों में अगर आप देखें कि ये हाथ से काम की ओर प्रवृत्त होते हैं, तो आप शायद इस बात पर जोर न दें कि उनकी शिक्षा बस किताबों के ही द्वारा हुआ करे और बुजुर्गों की दृष्टि में किताबों का पढ़ना–पढ़ाना ही शिक्षा कहलाता हैं।

छोटों के प्रति आदर–भाव तो स्नेह, आशीर्वाद और मृदुता का रूप धारण कर लेता है। यह सिद्धान्त जो मैंने अभी बतलाया है, आप में बच्चे के लिए स्नेह और सहानुभूति उत्पन्न करेगा, आपको असफलताओं का सामना करने के लिए सहनशीलता और धैर्य की वह शक्ति प्रदान करेगा जो स्नेह के अतिरिक्त अध्यापक की सब से बड़ी पूंजी है। आप बच्चों के अच्छे अध्यापक यानी प्रकृति की धरोहर के सच्चे अमीन बन जाएंगे और आपके परामर्श और आपके आदर्शों से बच्चों के पिता और अभिभावक भी अपने कर्त्तव्य को भली भांति समझ सकेंगे और अध्यापक और अभिभावक के सहयोग से शिक्षा और विकास का काम सचमुच सुचारु रूप से संपन्न किया जा सकेगा।

साभार– नई तालीम (110) अखिल भारतीय संघ राजघाट, वाराणासी, से।

खेल-खेल में गणित

अमोद कारखानीस

स्कूल में हम कई सारे विषय पढ़ाते हैं। हर विषय की अलग मांग होती है। इसलिए, उन्हें पढ़ाने का तरीका भी अलग अलग होना चाहिए। दुर्भाग्यवश हम सभी एक ही तरीके चॉक और टॉक विधि से पढ़ाते हैं। शिक्षक कक्षा में आते हैं, नए विषयवस्तु के बारे में एक भाषण देते हैं, कुछ सवालों के जवाब कक्षा में करवाए जाते हैं और होमवर्क देकर आगे चल देते हैं। गणित सिखाते समय एक चीज़ और होती है। कक्षा में जब कुछ जोड़–बाकी के सवाल कराए जाते हैं, तब उन्हें हल करने का 'तरीका' बताया जाता है और कहा जाता है, यह तरीका याद रखो, रट लो, यह नियम है। इस तरह के उदाहरण इसी तरीके से हल किए जाते हैं और साथ दिए जाते हैं, होमवर्क के नाम पर ढेर सारे सवाल। अगर आप 'अच्छे' स्कूल में पढ़ा रहे हों, तो बच्चों का गणित 'अच्छा' करना, यह ख़ास जिम्मेदारी होती है। इसलिए गणित के शिक्षक, कुछ ज्यादा ही सख्ती से खूब सारे सवाल करवाते हैं, बार–बार करवाते हैं। आशा यह है कि इतने सारे सवाल हल करने के बाद बच्चा परीक्षा में सही 'तरीका' याद कर पाएगा। नतीज़ा यह होता है कि बच्चे स्कूली परीक्षा शायद पास कर पाए पर वे न गणित सीखते हैं न गणित सिखाने का मूल उद्देश्य पूरा हो पाता है।

वैसे गणित सिखाने की प्रक्रिया को हम कई चरणों में बांट सकते हैं। पहला चरण है, जो अवधारणा हम पढ़ाना चाहते हैं, वह समझना। चूंकि गणित एक अमूर्त विषय है, उसकी अवधारणाएं भी अमूर्त स्वरूप में होती हैं, उन्हें यूं ही समझने में दिक्कत हो सकती है। इसलिए अवधारणा समझने के लिए कुछ ठोस चीज़ या गतिविधि का सहारा लेना चाहिए। अगर हमें जोड़–घटाव सिखाना है, तो सीधे अंकों के साथ जोड़ना सिखाने के बदले जोड़ने की या घटाने की क्रिया को, कुछ ठोस वस्तुओं द्वारा पहले करना चाहिए। होता यह है कि हम चिह्न पहले सिखाते हैं, उसका अर्थ बताते हैं और आंकड़ों के सवाल हल करना शुरू करते हैं। साथ में हम नियम भी बताते हैं, 'जब भी जुड़ गया, मिला, आ गया' ऐसे शब्द सवाल में दिखते हैं, तो तुम्हे '+' का चिह्न लगाकर जोड़ना है और अगर 'निकल गए, चले गए, छूट गए' जैसे शब्द होते हैं, तो '–' की संक्रिया करना है और इसके अभ्यास के लिए सवाल दिए जाते हैं 'एक पेड़ पर 6 तोते थे, उस में से दो उड़ गए, तो पेड़ पर कितने तोते रह गए?'

ऐसे सवालों के साथ हम खुश रहते हैं कि वाह! हमने गणित को रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जोड़ दिया। अब बच्चों को गणित करने में मज़ा आएगा।

दरअसल यह सवाल बिल्कुल बेतुका है। मुम्बई का माटुंगा क्षेत्र कंकरिट का जंगल है, वहां एक स्कूल में, मैं काम करता हूं। वहां के बच्चों के इर्द–गिर्द पेड़ कहां हैं? और अगर हैं भी तो मुम्बई में प्रदूषण की वज़ह से वहां पेड़ पर कोई तोते

आकर नहीं बैठते। इन बच्चों के लिए इस सवाल का कोई तुक नहीं बनता। और यही सवाल करते समय एक गांव के बच्चे ने मुझे बताया था कि तोते छोटे–छोटे झुंड में रहते हैं। उनकी आदत है, एक उड़ गया, तो उसके पीछे–पीछे बाकी सारे भी उड़ जाएंगे। तो आपके सवाल का जवाब है...

खैर, यह विषयांतर हुआ। मुद्दा यह है कि हम विषयवस्तु पढ़ाने के बाद ढेर सारे सवाल बच्चों से करवाते हैं, जिनसे बनाए नियम का उन्हें अभ्यास हो जाए। परंतु जरूरत यह है कि गणित की किसी भी अवधारणा को, इस तरह 'नियम' बनाकर उसे याद रखने का कहकर खत्म नहीं किया जा सकता। अवधारणा बच्चों को समझ में आए, इसलिए पहले उसे ठोस चीजों से करना चाहिए। आजकल गतिविधि आधारित सीखने का बड़ा नाम चल रहा है। कुछ न कुछ गतिविधि करा कर पढ़ाना। इस विचार से कई सारे शिक्षक गतिविधियां ढूंढ़ रहे हैं। गणित शिक्षा में ठोस चीजों को लेकर गणित की अवधारणा समझना, यही इसका उद्देश्य होना चाहिए।

अगला चरण है, अवधारणा को गणित की याने आंकड़े और चिह्नों की भाषा में व्यक्त करना। अगर प्राथमिक स्तर से गणित की अवधारणाएं मूर्त–अमूर्त वस्तुओं द्वारा बच्चों को समझाई जाए, तो इस चरण में बच्चों को ज्यादा दिक्कत नहीं आती, बशर्ते उन्हें पहले से इस तरह के मूर्त–अमूर्त को व्यक्त करने की आदत हो।

तीसरे चरण में, सीखी हुई अवधारणा का इस्तेमाल करके कुछ सवाल हल करने हैं। हमारे गणित की शिक्षा का उद्देश्य ही, इस तरह के सवालों को हल करने की क्षमता का विकास करना हो चुका है। गणित, यही एकमात्र स्कूली विषय है, जहां तर्क के आधार पर ही, सभी कुछ होता है। यह एकमात्र विषय है, जिसके जरिए, हम बच्चों में तार्किक सोच की आदत डाल सकते हैं। तर्क के सहारे हर चीज का विश्लेषण कर के, हल ढूंढ़ने का नज़रिया दे सकते हैं। परंतु हर सवाल के हल करने का तरीका बताकर, हम यह मौका गंवा देते हैं। जो भी नियम हम बताने जानेवाले हैं, उसे बच्चों को अपने आप ढूंढ़ कर निकालने दें। इसमें जो खोज करने का आनन्द है, उसे हमें बच्चों से छीनना नहीं चाहिए। यहां, मैं कुछ उदाहरण देना चाहूंगा–

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के तहत विकसित पाठ्य पुस्तक में 'संभाविता' पर एक बड़ा अच्छा खेल है। इस खेल में बच्चे सिक्का उछालते हैं। सिक्के पर चित आने से एक कदम आगे और पट आने से एक कदम पीछे। थोड़ी देर खेलने के बाद यह महसूस होता है कि यद्यपि कुछ बच्चे थोड़ा आगे या पीछे निकल गए पर अधिकांश बच्चे मध्य रेखा के इर्दगिर्द ही हैं। 'बराबरी की संभाविता'

की अवधारणा समझने के लिए, इससे अच्छा क्या तरीका हो सकता?

इसी बात को आगे बढाकर, हमने एक स्कूल में एक प्रयोग किया जो काफी सफल रहा। हमने ऐसे पांसे (डाइस) बनाएं, जिनमें तीन ओर (तरफ) एक रंग के थे और तीन ओर दूसरे रंग (लाल और हरा)। ऐसे दूरंगी, दो तरीके के पांसे बनाएं एक, जिसपर कोई आंकड़े नहीं थे, दूसरा जिस पर 1–3 आंकड़े, दोनों रंगों पर थे।

हमने नियम तय किया कि अगर पांसे में हरा रंग दिखे, तो उसका मतलब है आगे जाना। अगर हमें लाल रंग दिखे तो, वह हमें इसकी उलटी क्रिया करने को कहता है। जब पांसा फेंकते हैं और हरा 2 आ जाता है, तो इसका मतलब है दो घर आगे जाना और लाल रंग आ जाए तो उसके विपरित यानि दो घर पीछे जाना है। हर बच्चे ने पांसे बनाए और वे खेल रहे थे। मैंने उन्हें अपनी चाल लिखकर रिकार्ड करने को कहा। तब उन्हें कुछ चिह्नों की जरूरत पड़ी–आगे जाने को '+' और पीछे जाने को '–', चिह्न इस्तेमाल करके सारा काम आसान हो गया। साथ ही चिह्नांकित संख्याओं के जोड़–घटाव के नियम भी उन्होंने ढूंढ लिए। हमारे यहां के तालाब के पानी का स्तर गिनने का अभ्यास भी बच्चों ने किया। उन्होंने सितंबर में पहला प्रयोग किया और उसी स्तर को जीरो मान लिया। बारिश के मौसम में पानी का स्तर बढ गया, तो कितना बढ़ा वे आसानी से बता पाए। गर्मी में तालाब के पानी का स्तर कम हुआ, तो ऋण संख्याओं का इस्तेमाल करना वे सीख गए।

गणित, बच्चों के जीवन में होता है या लाया जा सकता है पर इसके लिए गणित को उनकी जिन्दगी का एक हिस्सा बनना जरूरी है। यह सबक, मैंने उस दिन सीखा, जब मैं उनके साथ इंटरक्लास क्रिकेट मैच देखने गया। यह मैच बच्चों के लिए काफ़ी महत्त्वपूर्ण था, क्योंकि कांटे की टक्कर थी। चूंकि यह सीमित ओवर का मैच था, बच्चे हर पल कितनी गेंद बची हैं, कितने रन चाहिए, रन रेट क्या होनी चाहिए, क्या है, इसका हिसाब, हिसाब लगा रहे थे और चिल्लाकर खेलनेवालों को बता रहे थे। दूसरे दिन कक्षा में भी यही चर्चा जारी रही थी। यद्यपि हमारी टीम हार गयी थी, फिर भी वे कई सारी–संभावनाओं पर, जैसे अगर उस गेंद पर चन्दू तीन रन लेने की कोशिश नहीं करता या कार्तिक ऑफ साइड पर इतने सारे रन बना रहा था, तो वहां एक अतिरक्ति क्षेत्ररक्षक क्यों नहीं रखा गया, की चर्चा कर रहे थे। चर्चा के दौरान मैंने रनरेट के बारे में सवाल पूछा, तब एक बच्चे ने बड़ा दिलचस्प जवाब दिया, उसने कहा, 'सर कल आप जो औसत सीखा रहे थे न, हमारी भाषा में उसको रन रेट कहते हैं।''

मुद्दा यह है कि गणित की अवधारणा सिखाने के बाद, उसके अभ्यास के लिए खेलों की बहुत मदद हो सकती है। हां, मुझे मालूम है आप शायद इस पर आपत्ती उठाएंगे, कहेंगे, 'इस तरह के इक्का–दुक्का उदाहरण हो सकते हैं, पर हर अवधारणा पर खेल नहीं हो सकता।' शायद आप की बात सही है, पर शायद हमने ठीक से ढूंढ़ा भी नहीं है और कहीं रेडीमेड खेल नहीं हैं, तो अपनी कल्पनाशक्ति के आधार पर नए खेल बनाए जा सकते हैं। इस काम में आप बच्चों की मदद ले सकते हैं।

चूंकि इस तरह के खेल ढेर सारे नहीं मिलेंगे, हमें गणित की अवधारणाओं को बच्चों के साथ इस्तेमाल करने के मौके तलाशते रहना चाहिए और एक भी

मौका छूटने नहीं देना चाहिए। एक आखिरी उदाहरण देकर यह लेख पूरा करता हूं।

मुम्बई में मूसलाधार बारिश होती है। मौसम के बारे में बताते समय स्कूल की भूगोल की शिक्षिका ने बच्चों को बारिश का मापन कैसे करते हैं, बताया और यह भी बताया कि वे खुद का रेन गेज़ बना सकते हैं। एक बिज़लरी की बोतल का ऊपरी हिस्सा काट दें, तो वह सीधी बोतल बनेगी। उस बोतल को छत पर खुला रख दो और दूसरे दिन देखो कि बोतल में बारिश से कितना पानी इकट्ठा हुआ? पानी की ऊंचाई माप लो, उतनी बारिश हुई। बच्चों ने यह करके देखा। लेकिन उस हफ्ते मुम्बई में ज्यादा बारिश नहीं हुई, तो बहुत कम पानी इकट्ठा हुआ। पानी का स्तर मापन करने में दिक्कत थी। साथ में यह भी देखा गया कि जब बारिश नहीं रहती है, तब मुम्बई में काफी गर्मी होती है तब वाष्पीकरण भी सोचनीय रहा होगा। इसलिए सुझाव यह आया कि छोटे मुंह की बोतल लें और उस पर एक बड़ा कीप (फनेल) रखें जिससे ज्यादा क्षेत्रफल पर गिरने वाले पानी को इकट्ठा किया जा सके। अब इस रेन गेज़ की गणना करना है। एक इतना छोटा–सा प्रयोग पर उसमें उन्हें न केवल हाल ही में सीखे 'क्षेत्रफल' और 'आयतन' के सूत्र याद करने पड़े बल्कि उनका अनुप्रयोग भी सीखा।

कंप्यूटर इंजीनियर, लेखन एवं चित्रकारी का शौक। इन दिनों गणित शिक्षण को रुचिकर बनाने के लिए कुछ खेल तैयार करने में जुटे हैं। मुंबई में रहते हैं ।

बागवानी का आनंद

विश्व विजया सिंह

मां ने हमें बताया कि धनिया के दानों को मिट्टी में बोने से वे उग जाते हैं। वही हरा धनिया, जो बाजार में बिकता है और हम सब्जियों में डालते हैं और चटनी बनाते हैं। हम भाई–बहनों ने घर के पिछवाड़े कुछ ज़मीन साफ़ की और छोटे से चौकोर भाग में धनिया बो दिया। पानी डालकर फिर अगले ही दिन से हम उसके उगने का इंतज़ार करने लगे। जब छोटे–छोटे अंकुर मिट्टी के बाहर नज़र आए तो हमारे उत्साह का ठिकाना न था, जैसे हमने कुछ बड़ा काम किया हो और उसका सुफल इस रूप में दिख रहा हो। कुछ दिन बाद जब पौधों में पत्तियां उग आईं तब तो हम ख़ुशी से चहकने लगे। अब हमने पता लगाया कि और क्या चीज़ें हम आसानी से बो सकते हैं। पता लगा अच्छे पके टमाटर के बीज डालने से टमाटर पैदा हो सकते हैं। अब फिर हम जुट गए क्यारी तैयार करने में। हमें लगता कि फटाफट ज़मीन में बीज डालें और टमाटर निकल आएं, पर जितना समय इस प्रक्रिया में लगता है वह तो लगना ही था। हम नियम से पौधों को पानी पिलाते और जब पहला टमाटर हरा–हरा, छोटा–सा, प्यारा–सा हमें दिखा तो हमारी प्रसन्नता के क्या कहने थे। एक और फिर अनेक हरे–हरे टमाटर, धीरे–धीरे लाल हुए तब तो हमारी ख़ुशी चरम पर थी। बाज़ार में और हमारे रसोई घर में रखे ढेरों–ढेर टमाटरों के सामने हमें स्व–उत्पादित टमाटर अत्यधिक मूल्यवान लगते। हम आपस में बात करते– अपने टमाटर कुछ ज़्यादा चमकदार हैं। आकार में तो वे बहुत बड़े न थे इसलिए प्रशंसा में वह तो जोड़ नहीं सकते थे। मां के पास वे दो–चार टमाटर हम ले जाकर कहते, 'देखो कितने सुंदर, कितने चमकदार हैं।' मां हमें वस्तुस्थिति से अवगत कराने हेतु बोलतीं, 'हां अपनी चीज़ तो सुंदर लगती ही है पर चमक तो सभी टमाटरों में ऐसी ही होती है।' किन्तु हमारा बालमन इस बात को स्वीकार करने को तैयार नहीं था।

धीरे–धीरे स्वयं ज़मीन को खोदकर, मिट्टी से पत्थर बीनकर, साफ़ सुथरी क्यारियां बनाना और उसमें बीज बोना या छोटे पौधे रोपना हम अच्छी तरह सीख गए। जब पहली बार हमने मिर्ची पैदा की तो वह ख़ुशी निराली थी। आलू भी बोने की

हमने कोशिश की, किन्तु उसमें हमें सफलता नहीं मिल पाई थी। यही था, करके सीखना और स्वयं अनुभव प्राप्त करना।

बड़े होने पर भी हमें इस काम में आनन्द आने लगा। याद है अपनी ख़ुद की गृहस्थी बसने पर घर के पास उपलब्ध थोड़ी सी कच्ची ज़मीन में हमने एक नींबू, एक कपास, एक आम और दो–तीन पपीते के पेड़ उगा लिए थे, जिनके फल हम आस–पड़ोस में बांटते तो लोग ताज्जुब करते कि इतनी से जगह में आप लोग क्या–क्या पैदा कर लेते हैं। लौकी, तोरई और सेम की बेलें चढ़ाकर सब्जियां भी मिल जातीं और हरियाली भी दिखती रहती। उन बेलों को देखकर और उसमें लटकती लौकी–तोरई को देखकर एक आन्तरिक ख़ुशी मिलती। इसका अंदाजा या कल्पना वही व्यक्ति भली प्रकार कर सकता है जिसने स्वयं ऐसा किया हो।

मुझे ऐसा लगता है हर बच्चे को इस तरह के अनुभव मिलने ही चाहिए। बच्चों की क्षमताएं व योग्यताएं अलग–अलग हो सकती हैं, उनकी बुद्धि–लब्धि या बुद्धि का स्तर भी भिन्न होता है, किन्तु मिट्टी से जुड़ना, खोदना, बोना, सींचना हर बच्चे के लिए रुचिकर होगा। जब तक कि बड़ों द्वारा उनके दिमाग़ में यह न बैठा दिया जाए कि मिट्टी में मत खेलना, गंदे हो जाओगे या मिट्टी को मत छूना हाथ ख़राब हो जाएंगे। इस तरह की ग्रंथियां जन्मजात नहीं होतीं, यह निश्चित ही बड़ों की देन है।

अभिभावक के रूप में और बतौर शिक्षक हमें ध्यान रखना चाहिए कि हम बच्चों में इस तरह की ग्रंथियां पैदा न करें। वरन् बच्चों को स्वाभाविक रूप से बढ़ने के अवसर दें। बच्चों को मिट्टी में खेलने, मिट्टी से कुछ बनाने, बागवानी या कुछ उगाने के अनुभव अवश्य मिलने चाहिए। वर्षा से भीगी मिट्टी की सौंधी ख़ुशबू किसे पसन्द नहीं? मिट्टी से जुड़ाव हर इंसान की स्वाभाविक चाहत होती है।

शिक्षाशास्त्रियों ने बालक के विकास में प्राकृतिक परिवेश को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना है। प्राकृतिक वस्तुओं, पेड़–पौधों, फूल–पत्तियों, फलों–सब्जियों आदि के उपयोग से बालक की इन्द्रियों का विकास होता है। विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तुओं, वनस्पतियों आदि के निरीक्षण और प्रयोग से शिक्षार्थी को वैज्ञानिक ज्ञान मिलता है। विभिन्न रूप, रंग, गति के विभिन्न गुणों की प्रशंसा और पहचान से बालक का संवेगात्मक और सौन्दर्यात्मक विकास होता है। इस प्रकार प्राकृतिक परिवेश से बालक की इन्द्रियों, मस्तिष्क तथा मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण और क्रियात्मक शक्तियों का विकास होता है।

बुनियादी शिक्षा का मूलभूत सिद्धान्त है कि शिक्षा किसी उत्पादक उद्योग की क्रियाओं द्वारा होनी चाहिए। अक्टूबर 1952 में सेवाग्राम में आयोजित आठवें अखिल भारतीय नई तालीम सम्मेलन में नई तालीम के विभिन्न विषयों पर विचार करने के लिए अलग–अलग अध्ययन मंडलियां बनाई गई थीं। अन्न और वस्त्र की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर और ग्राम विकास का दृष्टिकोण सामने रखकर खेती और बागवानी समिति ने निम्नलिखित निष्कर्ष प्रस्तुत किए–

बुनियादी स्कूलों में बागवानी और खेती का प्रमुख स्थान हो और उसी के अनुसार सभी स्कूलों को संयोजित करना आवश्यक है। शिक्षण क्षेत्र में खेती का प्रमुख स्थान बना सकते हैं क्योंकि उससे हम शिक्षा को स्वावलम्बी तथा स्वाश्रयी बना सकते हैं और उसके द्वारा विद्यार्थियों को भिन्न–भिन्न विषयों का काफ़ी ज्ञान दे सकते हैं।

- स्वावलम्बन, शिक्षण तथा प्रबन्ध के अनुसार बुनियादी शालाओं के पास ज़मीन होनी चाहिए। यदि ज़मीन अच्छी हो और पानी का इंतजाम हो तो बुनियादी स्कूल के लिए 25 लड़कों के पीछे एक एकड़ ज़मीन कम से कम होनी चाहिए।
- शालाओं में कृषि को विकसित करने के लिए मकान, औज़ार, सिंचाई इत्यादि की व्यवस्था करनी चाहिए।
- बागवानी तथा खेती का काम शिक्षकों की ईमानदारी, समझबूझ, कृषि के व्यावहारिक ज्ञान, बच्चों की लगन, ग्रामीण समाज के सहयोग, ऋतु की पकड़, खेती की देखभाल और पानी की प्रत्येक बूंद के उपयोग इत्यादि पर निर्भर रहता है, यह ध्यान में रखना चाहिए।
- बागवानी और खेती के काम में उपयोगिता और सौंदर्य का संतुलित मेल रखना चाहिए।
- खेती और बागवानी के काम का ज्ञानपूर्वक आयोजन करने से बच्चों को आवश्यक और उचित ज्ञान प्राप्त होना चाहिए।
- बुनियादी शाला परिवार को ग्राम स्वावलम्बन का दृष्टिकोण ध्यान में रखना चाहिए और फल–फूल, कन्दमूल, साग–सब्जी, ग्रामोद्योग की चीज़ें, कम्पोस्ट आदि का व्यावहारिक संदेश देना चाहिए और उत्पादन बढ़ाने में सहायता करनी चाहिए।

उपर्युक्त बिन्दुओं पर विचार करने से खेती और बागवानी का महत्त्व स्पष्ट हो जाता है। मेरे विचार से वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में इसे पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाना चाहिए।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 के अनुसार, ''उत्पादक–कार्य को पाठ्यचर्या का केन्द्रीय आधार बनाया जाए, तो पाठ्यचर्या की किताबी सूचना आधारित और सामान्यतया चुनौती न दी जा सकने वाली पद्धति बदली जा सकती है और बच्चों को जीवन–सम्बन्धी आवश्यकताओं से जोड़ा जा सकता है। काम को इस्तेमाल करने का शिक्षाशास्त्रीय अनुभव बचपन और किशोरावस्था के विभिन्न स्तरों में विकास का एक प्रभावी और समीक्षात्मक औज़ार बन पाएगा।''

एक शोध से स्पष्ट हुआ है कि बागवानी में भाग लेनेवाले बच्चे खुश रहते हैं और उनकी विकास प्रक्रिया पर इसका सकारात्मक असर पड़ता है। रॉयल हॉर्टिकल्चर सोसायटी द्वारा दस स्कूलों पर किए गए शोध के परिणामों से यह सामने आया कि जिन स्कूली बच्चों को बागवानी के लिए प्रोत्साहित किया गया, उनमें अधिक चुस्ती–फुर्ती और आत्मविश्वास पाया गया। सेहत के लिहाज़ से भी वे बच्चे अधिक बेहतर थे।

रॉयल हॉर्टिकल्चर सोसायटी का यह भी सुझाव था कि बागवानी की गतिविधियां बच्चों के पाठ्यक्रम में शामिल होनी चाहिए क्योंकि इससे उनकी सीखने की क्षमता भी बढ़ती है।

आर.एच. सोसायटी में साइंस एंड लर्निंग के निदेशक के अनुसार, ''बागवानी की मदद लेकर पढ़ाने से पढ़ाई रचनात्मक हो जाती है और इसके नतीजे अधिक प्रभावी होते हैं।''

बच्चों की ऊर्जा व रुचि बागवानी में लगाने से उनकी यह आदत उन्हें रचनात्मक बनाती है। इसके ज़रिए बच्चे न सिर्फ़ प्रोत्साहित होते हैं, बल्कि उनमें कुछ काम करने की ख़ुशी पैदा होती है और उनका आत्मविश्वास बढ़ता है।

विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर में कार्यरत।

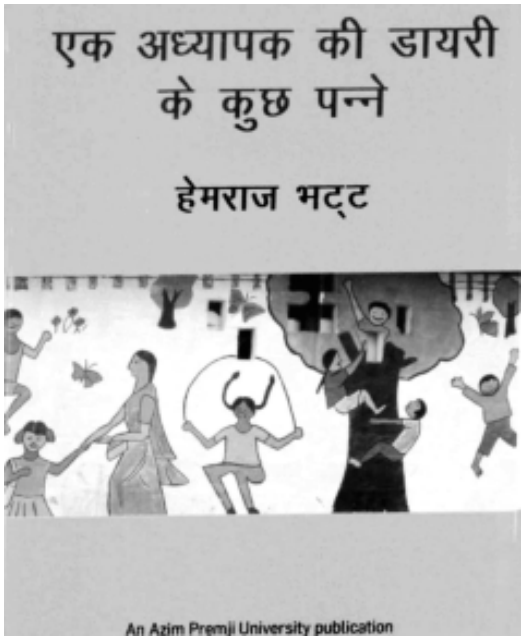

डायरी के पन्ने

हेमराज भट्ट

जब शिक्षकों के लिए डायरी लिखने की बात होती है, तो ये उनके लिए यांत्रिक कार्य जैसा ही होता है। अमूमन हर शिक्षक को डायरी लिखनी ही होती है, मगर उस डायरी में ऐसा कुछ नहीं होता, जो बच्चों के सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं पर सार्थक फीडबैक दे सके।

प्रसंगवश हेमराज भाटी हमारे बीच अब नहीं हैं, मगर उनके द्वारा लिखी डायरी का प्रकाशित स्वरूप हमारे हाथों में है। स्व. हेमराज भाटी द्वारा रचित डायरी को हाल ही में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय ने प्रकाशित की है। 64 पृष्ठों में समाहित इस डायरी में एक शिक्षक की शैक्षिक व्यवस्था, बच्चों की सीखने की समस्याएं तथा चुनौतियों के बीच उनकी निजी ज़िंदगी के आयाम खुलते जाते हैं। एक सामान्य शिक्षक कैसे सोचता है और वह बच्चों के बीच सीखने–सिखाने की नई खिड़कियां खोलता है इसकी झलकियां भी हमें इस डायरी में मिलेंगी। एक सरकारी स्कूल में शिक्षक रहे स्व. हेमराज ने वर्तमान शिक्षक प्रशिक्षण व्यवस्था पर भी सवाल उठाए हैं। हाल में ही प्रकाशित इनकी डायरी के कुछ अंश यहां दिए जा रहे हैं–

20 अगस्त, 2007

मैं सोमवार को नौ बजे सेवारत प्रशिक्षण में गोरसाड़ा पहुंचा। रास्ते में था, तो एनपीआर. सी. समन्वयक श्री राजेन्द्र प्रसाद जी का फोन आया कि बीआरसी. समन्वयक के साथ अपर जिला शिक्षा अधिकारी गढ़थाती जूनियर हाईस्कूल में चले गए हैं।

प्रशिक्षण में आज तेरह में से केवल चार प्रतिभागी उपस्थित थे। अक्सर रोज़ ही यह स्थिति रहती है, तो वहां कुछ भी बताने की इच्छा नहीं होती। आखिर चार-छः प्रतिभागियों में कुछ भी कहने का माहौल नहीं बनता। प्रतिभागियों को मूल्यांकन के मॉड्यूल बांटे और अच्छे प्रश्न कैसे हों और मूल्यांकन व मापन पर चर्चा कराई। एक बजे भोजनावकाश हुआ और उसके बाद छुट्टी हो गई।

प्रशिक्षण लगातार अरुचिकर होते जा रहे हैं। इस प्रशिक्षण में 25 से अधिक प्रतिभागियों ने प्रतिभागिता करना था। परंतु कुछ लोगों को, जो जिला मुख्यालय से आना-जाना करते हैं, उन्हें बीआरसी. मुख्यालय में ही प्रशिक्षण दे दिया गया, तो एनपीआर. सी. में प्रतिभागियों की संख्या घट गई है। अनुशासन नाम की कोई चीज़ नहीं रह गई है। जिसकी जब मर्जी हो रही है, आ रहा है, जब मर्जी हो रही है, जा रहा है। कोई पहले दिन आकर फिर आखिर के दिन दर्शन दे रहा है। जो लोग नियमित हैं, उनमें भी आक्रोश और उपेक्षा होना स्वाभाविक है। प्रशिक्षणों की गुणवत्ता को सही रास्ते पर लाना, अब शायद संभव भी नहीं है।

दो बजे वापस कमरे पर धौंतरी पहुंचा, तो यहां दो लड़के इंतजार कर रहे थे। उन्हें अपनी पत्नियों के दस वर्ष पुराने कक्षा पांचवी की अंक सूचियों की नकल चाहिए थी। ढाई बजे स्कूल के लिए चला, तो रास्ते में बीएसए. साहब मिले। उन्होंने मुझे रोका और कहा कि हम आपके स्कूल को देखकर आ रहे हैं हालांकि तब तक स्कूल का अवकाश हो चुका था। उन्होंने शायद बाहर से ही स्कूल को देखा होगा।

बीएसए. साहब व्यंग्य से बोले, ''आपका स्कूल बहुत अच्छा है। आपकी फुलवारी देखकर मैं बहुत खुश हो गया। आपका काम भी देख लिया है। पुताई आपने बहुत अच्छी कर रखी है। रैंप रेलिंग बहुत अच्छी बनी है। और स्कूल की सफाई तो बहुत ही अच्छी है।'' मैं जानता था कि यह सब व्यंग्य में बोला जा रहा है। मैं चुप ही रहा।

आजकल बरसात के कारण चारों ओर झाड़-झंखाड़ उग आया है। स्कूल में चाईल्ड फ्रैंडली के अंतर्गत निर्माण कार्य चल रहा है तो चारों ओर रेत, रोड़ी, लकड़ी और सीमेंट आदि

दूसरा सामान बिखरा हुआ है सब कुछ अस्त-व्यस्त है। इसलिए परिवेश बहुत ही गंदा लग रहा है। मैं खुद ही इस माहौल से चिंतित हूं। शायद एक आध महीने में सब ठीक हो जाएगा। पर बाहर से आने वाले आदमी के लिए क्या कहा जा सकता है। फिर ऊपर से अफसर। आपको सही सलाह देने के बजाय पचास तरह की नुक्ताचीनी आपके काम पर करेंगे।

बीएसए. की इस टिप्पणी से एक बार तो मैं तनाव में आ गया था। पर थोड़ी देर में संभल गया। आखिर हर आदमी की अपनी कमजोरियां हैं। अफसर शायद ही कभी अपनी कमजोरियों पर नजर डालते हों या यह सोचते हों कि उनके अधीनस्थ कर्मचारी उनसे क्या-क्या अपेक्षा रखते हैं। मैं अपनी कमजोरियों को पूरी तरह से महसूस करता हूं पर उन्हें दूर करने के प्रति भी प्रतिबद्ध हूं। मैं स्वयं को भगवान के प्रति उत्तरदायी मानता हूं और जब भी अपनी कमजोरियों के कारण तनाव में आता हूं, भगवान को यथास्थिति बताता हूं। मैं अपने स्कूल की कमज़ोर स्थिति से वाकिफ़ हूं। इसे मजबूत बनाने के लिए कटिबद्ध हूं और उम्मीद करता हूं कि शीघ्र ही उन्हें दूर कर सम्मान के साथ खड़ा हो सकूंगा। और इतना आत्मविश्वास जीत लूंगा कि अपने स्कूल में शिक्षा निदेशक को बुलाने का साहस कर सकूंगा।

फिर भी बीएसए. साहब बोले कि क्या आपको पाठ्य पुस्तक की समीक्षा का पत्र मिल गया है? यद्यपि यह पत्र उनके कार्यालय से नहीं मिला था, परंतु क्योंकि सीधे निदेशालय से मिल गया था, इसलिए मैंने स्वीकृति दे दी। उन्होंने कहा कि समीक्षा में जाने से पहले मैं एक बार उनसे मिल लूं। मैंने उनसे आग्रह किया कि निदेशालय से मुझे कहा गया है कि हम पुस्तक समीक्षा के लिए अपनी टीम बढ़ा लें। उन्होंने इसकी स्वीकृति नहीं दी और चले गए। यह सारी बात सड़क पर खड़े-खड़े ही हुई। वे बस में बैठे थे और मैं उनकी खिड़की के पास खड़ा रहा।

मैं स्कूल में गया और दोनों लड़कों को उनकी पत्नियों के अभिलेख देकर वापिस घर आ गया।

आज दिनांक 20 अगस्त मंगलवार को सीआरसी. रायमेर में प्रशिक्षण समाप्त हुआ।

हरीश और गिरीश ने झगड़ा किया। ब्लूप्रिंट समझाया। टीए. बिल भरवाया और भुगतान किया। सवेरे कुल उपस्थिति 6 थी। भोजन और टीए. के समय उपस्थिति 11 थी। सकलानी ने मिठाई खिलाई। पुस्तक समीक्षा हेतु फोन से कई लोगों से संपर्क।

साभार– अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बैंगलूरु द्वारा प्रकाशित 'एक अध्यापक की डायरी के कुछ पन्ने' से।

शोध

लक्ष्य की ओर बढ़ने की कवायद

विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, प्रारम्भिक शिक्षा में गुणवत्तापूर्ण सार्वजनीकरण परियोजना के अन्तर्गत पिछले चार वर्षों से उदयपुर नगर की 14 कच्ची बस्तियों के सरकारी व गैर सरकारी स्कूलों के बच्चों के सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में संलग्न है। इस कार्य में शामिल है बच्चों को उनकी मनपसंद पुस्तकें उपलब्ध कराना ताकि उनकी पढ़ने और पढ़कर समझने की कुशलता का विकास हो सके। साथ ही बच्चों की गणितीय कौशल के विकास के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। इस कार्य के बेस लाइन अध्ययन और इन्टरवेंशन के बाद, परिणामों को समझने के लिए एण्डलाइन अध्ययन किया गया। इस अध्ययन का सीमित मकसद यह है कि किए गए कार्य में कहां तक आगे बढ़े हैं और कौनसे क्षेत्र ऐसे हैं, जिनमें गहराई से कार्य किए जाने की महत्ती आवश्यकता है। प्रस्तुत है इस अध्ययन का संक्षिप्त स्वरूप।

उदयपुर शहर की 14 कच्ची बस्तियों के 56 सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों के बच्चों के शैक्षिक उन्नयन के लिए विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र के द्वारा प्रारम्भिक शिक्षा के गुणात्मक रूप से सार्वजनीकरण की एक परियोजना पर कार्य किया जा रहा है। इस परियोजना के अन्तर्गत किए जा रहे कार्यों का मूल्यांकन एक बाहरी निकाय, दिल्ली स्थित एज्यूकेशन क्वालिटी फाउण्डेशन ऑफ इण्डिया (ई.क्यू.एफ. आई.) संस्था द्वारा किया गया। बाहरी संस्थाओं द्वारा किया गया मूल्यांकन आमतौर पर बोर्ड की परीक्षा की तरह होता है, जिसमें प्रश्न पत्र कैसा होगा उसका पूर्वानुमान लगाना मुश्किल होता है। यह मूल्यांकन हमें यह बताता है कि जो कार्य और प्रगति बच्चों ने की वह मूल्यांकनकर्त्ता की दृष्टि में कैसी है? दूसरी ओर जो मूल्यांकन बच्चों के साथ काम करने वाली संस्था स्वयं करती है वह न सिर्फ हमें यह बताता है कि बच्चे ने क्या सीखा और उसे क्या सीखने की ज़रूरत है, बल्कि उससे आगे बढ़कर, उनकी आगे सीखने में कैसे मदद की जाए, पर हमारी समझ बढ़ाता है, जिससे शिक्षकों के साथ योजना बनाने, शिक्षक प्रशिक्षण, सामग्री निर्माण व अन्य गतिविधियों के आयोजन में मदद मिलती है।

परियोजना में किए जा रहे कार्यों के संदर्भ में कक्षा 3, 5 एवं 7 में हिन्दी व गणित विषय में बच्चों का अधिगम स्तर जानने के लिए 28 से 30 जुलाई 2010 को बेसलाइन मूल्यांकन किया गया था। सत्र के अन्त में 22 से 25 मार्च 2011 को एण्डलाइन मूल्यांकन किया गया। मूल्यांकन हेतु 74 स्कूलों से आंकड़े एकत्रित किए गए, जिनमें 31 सरकारी स्कूल, 8 सरकारी कन्ट्रोल स्कूल (जिनमें परियोजना के अन्तर्गत सीधे कार्य नहीं किया जा रहा है), 24 प्राइवेट स्कूल, 7 प्राइवेट कन्ट्रोल स्कूल तथा 4 विद्या भवन स्कूल शामिल थे।

मूल्यांकन में उपस्थित बच्चों की संख्या

कक्षा	सरकारी स्कूल	सरकारी स्कूल कंट्रोल	प्राइवेट स्कूल	प्राइवेट स्कूल कंट्रोल	विद्या भवन स्कूल
III	275	89	284	81	62
V	329	88	237	62	53
VII	234	48	216	82	100

प्राथमिक कक्षाओं में शिक्षण प्रक्रियाओं का उद्देश्य बच्चों में पढ़ने, लिखने और गणित की आधारभूत योग्यताओं एवं क्षमताओं को विकसित करने में मदद करना है। अतः मूल्यांकन के लिए प्रश्न–पत्र भी इन्हीं को ध्यान में रखकर तैयार किए गए।

उद्देश्य

- भाषा और गणित की विभिन्न क्षमताओं में बच्चों के सीखने के स्तर को पहचानना।
- विभिन्न अवधारणाओं, उनके दैनिक जीवन में उपयोग के बारे में बच्चों की समझ को जानना।
- सम्बन्धित परिणामों को शिक्षकों के साथ साझा करना ताकि उन्हें अपनी शिक्षण प्रक्रियाओं को मापने में मदद मिले।

हिन्दी में परीक्षण की जाने वाली क्षमताएं

- पढ़ना और समझना
- सुनना (शब्दों को उनकी आवाज से पहचानना)
- लिखना (क्रियात्मक लेखन, वाक्य निर्माण)
- वर्तनी
- व्याकरण

गणित में परीक्षण की जाने वाली क्षमताएं

कक्षा – 3 व 5

- संख्या ज्ञान
- पैटर्न और क्रम पहचानना
- अंकगणितीय संक्रियाएं
- समस्या समाधान
- दैनिक जीवन में अनुप्रयोग
- आधारभूत संरचनाएं एवं ज्यामिति

कक्षा – 7

- ज्ञान
- समझ
- अनुप्रयोग
- कौशल

तुलनात्मक अध्ययन

सभी स्कूलों में एण्डलाइन के परिणाम बेसलाइन की तुलना में अच्छे हैं। परिणामों में सुधार काफी उत्साहजनक हैं। इन्टरवेंशन समूह (वे विद्यालय जिनमें प्रोजेक्ट के तहत काम किया जा रहा है) का विषयवार विश्लेषण निम्नानुसार है–

कक्षावार बच्चों का हिन्दी में प्रदर्शन

स्कूल	कक्षा 3		कक्षा 5		कक्षा 7	
	बेस लाइन	एंडलाइन	बेस लाइन	एंडलाइन	बेस लाइन	एंडलाइन
सरकारी स्कूल	28.34	41.85	34.02	53.54	45.66	51.13
सरकारी कंट्रोल स्कूल	34.30	37.21	45.18	52.88	40.92	44.96
प्राइवेट स्कूल	55.40	60.40	58.68	69.60	66.00	68.26
प्राइवेट कंट्रोल स्कूल	60.00	61.90	54.44	41.25	63.26	68.29
विद्या भवन स्कूल	56.66	58.13	57.52	44.32	64.70	64.06

हिन्दी में उपलब्धि का कक्षावार विश्लेषण कक्षा–3 का एण्डलाइन टेस्ट हमें दिखाता है कि शुरुआती अन्तर के बावजूद सरकारी स्कूल के बच्चे और निजी स्कूलों के बच्चे सालभर में लगभग बराबर की स्थिति पर आ गए हैं। जबकि बड़ी कक्षाओं में अच्छी खासी बढ़ोत्तरी के बावजूद सरकारी और निजी विद्यालयों में अन्तर बरकरार है। इसका एक सम्भव कारण बच्चों का अपनी कक्षा स्तर से बहुत पीछे होना हो सकता है।

गणित के प्रदर्शन में विद्या भवन के स्कूलों के बाद सरकारी स्कूलों की सभी कक्षाओं में बढ़ोतरी, शेष से बेहतर रही है।

दक्षता आधारित क्षमताओं में परिणामों का विश्लेषण

हिन्दी

पढ़ना : पढ़ने की क्षमता जांचने के लिए एक गद्यांश या पद्यांश पर कुछ सवाल पूछे गए थे। विद्या भवन स्कूलों का परिणाम इस क्षमता में शुरू से काफी बेहतर था परन्तु अन्य विद्यालयों में भी इस दक्षता में सुधार देखा गया।

वर्तनी : सभी समूहों का इस दक्षता के प्रदर्शन में सुधार हुआ है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि परियोजना के तहत हमने वर्तनी सुधार पर कोई कार्य नहीं किया। परन्तु हमने स्कूलों में पढ़ने के मौके

बढ़ाने के लिए कई प्रयास किए। फलस्वरूप बच्चों के लिखने, पढ़ने व वर्तनी में सुधार देखा गया।

व्याकरण : व्याकरण जांचने के लिए प्रश्न पत्र में बहुवचन संज्ञा शब्द बताना, पर्यायवाची, मुहावरे आदि पूछे गए थे। परियोजना की समझ व्याकरण को लेकर कुछ अलग है। हम यह मानते हैं कि व्याकरण सीखना याद करने के बजाए भाषा में निहित नियमों का समझना या खोजना है। ऐसे में सवाल भी अलग तरह के पूछे जाने चाहिए। जिसमें सार्थक उपयोग पर जोर हो, जबकि ज्यादातर परीक्षाएं (स्कूल एवं अन्य संस्थाओं की) ऐसा नहीं करतीं और बच्चों की याददाश्त की जांच करती हैं। बच्चों का प्रदर्शन इन याददाश्त वाले सवालों में भी अच्छा रहा।

लेखन : सभी समूहों में कक्षा 3 व 5 में इस दक्षता में बच्चों को और मौके मिलने की जरूरत है। लिखने के कौशल के तहत वाक्य निर्माण, चित्र समझकर उसके बारे में लिखना, सृजनात्मक लेखन, शब्दों एवं विचारों से कहानी लिखना आदि अभ्यास शामिल है। जिन प्रश्नों में बच्चों को चित्र देखकर लिखना है, वहां बच्चे कर पा रहे हैं। लेकिन जहां बच्चों को खुद से सोचकर लिखना है, वहां उन्हें कठिनाई आ रही है।

बच्चे पढ़ने व लिखने की दक्षताओं में आत्मविश्वास प्राप्त कर सकें, इसके लिए ज़रूरी है कि उन्हें स्वतन्त्र रूप से पढ़ने व लिखने के पर्याप्त मौकों के साथ बोलने व अभिव्यक्ति के अवसर, व्यक्तिगत रूप से दिए जाएं। साथ ही कक्षा में ऐसे अवसर भी उपलब्ध करवाने होंगे, जहां बच्चे भाषा को दैनिक जीवन से जोड़ सकें। जैसे कहानियां सुनना एवं सुनाना, चित्र को पढ़ना एवं समझना। अपने बारे में, अपने परिवार के बारे में एवं अपने आसपास के बारे में बताना व लिखना, किताबें पढ़ना एवं बात करना, चित्र कहानी, शब्द अंत्याक्षरी, अभिनय आदि अभ्यास कक्षा में समय समय पर किए जाएं।

गणित

संख्या ज्ञान : संख्या ज्ञान के संदर्भ में बच्चों में अवधारणात्मक समझ का विकास हुआ है, परन्तु स्थानीय मान व संख्याओं के विस्तारित रूप पर अभी भी बच्चों की समझ बनाने की आवश्यकता है।

पैटर्न बनाना : पैटर्न बनाना व पहचानना ऐसी दक्षता है, जिसमें बच्चों का प्रदर्शन, कक्षा 3 में सुधरा है, परन्तु कक्षा 5 व 7 (सभी स्कूलों) में चित्र व संख्या पैटर्न पर अधिक अभ्यास की आवश्यकता है।

अंकगणितीय दक्षता : विद्या भवन स्कूलों के बच्चों के प्रदर्शन में सुधार, इस दक्षता में सर्वाधिक है। हालांकि, सभी स्कूलों की कक्षा 3 व 5 में इस दक्षता में सुधार कक्षा 7 की तुलना में अधिक है।

कक्षावार बच्चों का गणित में प्रदर्शन

स्कूल	कक्षा 3		कक्षा 5		कक्षा 7	
	बेस लाइन	एंडलाइन	बेस लाइन	एंडलाइन	बेस लाइन	एंडलाइन
सरकारी स्कूल	12.36	40.11	17.26	33.10	24.36	17.44
सरकारी कंट्रोल स्कूल	27.12	35.16	29.08	33.33	18.74	10.93
प्राइवेट स्कूल	42.38	60.06	30.40	46.15	33.94	19.61
प्राइवेट कंट्रोल स्कूल	31.30	40.15	31.86	43.70	27.28	13.40
विद्या भवन स्कूल	30.44	77.81	32.14	49.19	31.42	30.78

समस्या समाधान : विद्या भवन व निजी स्कूलों में सुधार है परन्तु अनुप्रयोग के सवालों में अभी और सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता है।

दैनिक जीवन में अवधारणा के उपयोग में सभी स्कूलों में सुधार है।

इस विश्लेषण से हम पाते हैं कि कक्षा 3 के बच्चे संख्याज्ञान, क्रम व पैटर्न पहचानना एवं आधारभूत आकार एवं ज्यामिति तो फिर भी कर रहे हैं, लेकिन गणना, इबारती सवाल एवं अनुप्रयोग वाले सवालों को नहीं कर पा रहे हैं। कुछ ऐसे ही आंकड़े कक्षा 5 के लिए भी दिखाई देते हैं। इसलिए कक्षा में गणित को रटने की बजाए दैनिक जीवन के साथ जोड़ने, उसे खेलों का हिस्सा बनाने की जरूरत है। इसके लिए कक्षा की प्रक्रियाओं को रटने, याद करने की बजाए उन्हें समझने, उनके साथ जूझने का मौका देना होगा। शुरुआत ठोस वस्तुओं से करते हुए उसे अमूर्त तक ले जाया जा सकता है।

कक्षा–7 के परिणामों पर विचार करें तो ये बड़े चौंकाने वाले हैं। कक्षा–7 में सभी स्कूल कोई वृद्धि नहीं दर्शाते हैं वरन् कुछ जगह यह प्रदर्शन ऋणात्मक भी है। यह विश्लेषण हमें दो चीजों पर विचार करने पर बाध्य करता है। पहला तो इस स्तर पर गणित की पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक, दूसरी बात जो हमें दिखाती है वह है बच्चों का प्रदर्शन तथा अध्ययन–अध्यापन की प्रक्रिया। कक्षा–7 तक आते–आते गणित का पाठ्यक्रम अपनी सोपानक्रमिक श्रृंखला के कारण अधिक बड़ा, जटिल तथा अधिक अमूर्त होता चला जाता है। वहीं वे किताबे (साथ ही अध्ययन–अध्यापन प्रक्रिया) जिनसे बच्चा पिछले 6–7 सालों से पढ़कर आया है वे मात्र परिभाषाएं याद करके, सूत्र रटने व हलों निश्चित तरीके से करने में विश्वास रखती है। छोटी कक्षाओं में ये मात्र कम होती है। बच्चों के फेल होने की आवृति भी कम होती है। परन्तु कक्षा–7 या उच्च प्राथमिक कक्षाओं में ये मात्रा बढ़कर इतनी हो जाती है कि बच्चा मात्र रटकर काम नहीं चला सकता। इसलिए आवश्यक है शुरू से ही बच्चों को स्वयं ये परिभाषाएं गढ़ने, सूत्र बनाने, एक से अधिक तरीकों से सवाल हल करने के मौके मिले। (पाठ्यपुस्तक को भी यह सुनिश्चित करना होगा) बच्चे अवधारणाओं को समझे न कि रटे, उनकी रोजमर्रा का गणित कैसे उन्हें स्कूली गणित सीखने में मदद कर सकता है। यह भी हमें देखना होगा।

तार्किक क्षमता को बढ़ाने के लिए मौखिक एवं लिखित कार्य अन्तःक्रियात्मक रूप से होना चाहिए। अभ्यास रोचक, चुनौतिपूर्ण एवं सार्थक होने चाहिए। कक्षा में आधारभूत संक्रियाओं को करते समय उन्हें बच्चों के साथ वास्तविकता से जोड़ते हुए अवधारणा के अनुप्रयोगों पर भी बल देना चाहिए।

निष्कर्ष

उपरोक्त परिणामों को देखते हुए कहा जा सकता है कि भाषा और गणित में ऐसे बहुत से मौके बच्चों को दिए जाने आवश्यक हैं, जहां वे उसे अपने दैनिक जीवन के साथ जोड़ सकें, सोच सकें एवं तर्क कर सकें। अभी भी हमें लगता है कि बच्चों के साथ आगे काम करने की जरूरत है। कक्षा शिक्षण में, उनके पूर्व अनुभवों से जोड़ते हुए उन्हें अवसर उपलब्ध करवाने की ज़रूरत है।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का सार्वजनीकरण एवं स्कूल सुधार परियोजना टीम, विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, उदयपुर।

रिपोर्ट

पहल बुनियादी शिक्षक तैयार करने की

भागचन्द्र कुमावत

विद्या भवन पिछले 14 वर्षों से बुनियादी तालीम को आज के संदर्भ में पुनः परिभाषित करने और अपनाने की दिशा में काम कर रहा है। इस काम के दौरान यह अनुभव किया गया कि बुनियादी तालीम को प्रभावशाली और व्यापकरूप से, तभी अपनाया जा सकता है, जब हमारे पास बुनियादी तालीम में पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित शिक्षक उपलब्ध हों। इस विचार से विद्या भवन गांधी शिक्षा अध्ययन संस्थान के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय ने शिक्षक–विद्यार्थियों (भावी शिक्षक) को बुनियादी तालीम के दर्शन और उसके सिद्धान्तों से परिचित कराने, उनका स्कूल और कक्षा शिक्षण में उपयोग का प्रशिक्षण देने की शुरूआत 2008 में की थी। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए–

- शिक्षक–विद्यार्थियों और अध्यापक शिक्षक संकाय को बुनियादी तालीम के दर्शन से परिचित कराना और उनमें बुनियादी तालीम की समझ विकसित करना।
- बी.एड. के कोर्स में अनिवार्य रूप से बुनियादी तालीम में विशेषज्ञता का प्रश्न–पत्र सम्मिलित करना।
- प्रशिक्षण में कक्षा शिक्षण की पाठ योजना में बुनियादी तालीम के समवाय या अनुबन्ध के सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देना।
- प्रशिक्षणार्थियों या पूर्व सेवाकालीन विद्यार्थियों

को हाथ के काम सिखाना।

- शिक्षक–विद्यार्थियों को गांवों की स्थानीय परिस्थितियों का अनुभव प्रदान करना।
- शिक्षक प्रशिक्षण के संदर्भ में बुनियादी तालीम की सामग्री विकसित करना।

शिक्षक प्रशिक्षण की शुरूआत में बुनियादी तालीम के तत्वों को शामिल करने, पाठ्यक्रम में बुनियादी शिक्षा की विषय–वस्तु को स्थान देने के लिए गांधी शिक्षा अध्ययन संस्थान के अध्यापक–शिक्षक संकाय की चर्चा बैठकें रखी गईं। इन चर्चा बैठकों के माध्यम से शिक्षक प्रशिक्षण में बुनियादी तालीम के सिद्धान्तों और उसके आयामों के लिए एक आधार भूमि तैयार की गई। इस दिशा में आगे बढने के लिए गांधी शिक्षा दर्शन पर शिक्षक–विद्यार्थियों और अध्यापक–शिक्षकों की विचार गोष्ठियां रखी गईं। इन विचार गोष्ठियों में 'हिन्द स्वराज' स्वावलम्बन, काम से ज्ञान का निर्माण, श्रम के प्रति निष्ठा, अहिंसा, शांति आदि मुद्दों पर व्यापक रूप से विमर्श किया गया। विचार गोष्ठियों से संस्थान की गांधी शिक्षा दर्शन की एक समझ बनी। गांधी शिक्षा दर्शन के निहितार्थ को स्कूली शिक्षा में किस प्रकार मूर्तरूप दिया जा सकता है, पर शिक्षक–विद्यार्थियों और अध्यापक–शिक्षकों में एक दृष्टि का निर्माण हुआ।

इसी तरह गांधी शिक्षा विचार के संदर्भ में सत्य, अहिंसा, स्वदेशी, स्वावलम्बन सहयोग, निर्भयता, समूहजीवन, मातृभाषा में शिक्षा, काम से ज्ञान का निर्माण, (उद्यम केन्द्रित शिक्षा) समवाय, सर्वधर्म समभाव आदि मुद्दों व तत्वों पर कार्यशालाएं आयोजित की गई। इन मुद्दों पर समझ बनाने की दृष्टि से शिक्षक–विद्यार्थियों के द्वारा प्रस्तुतीकरण दिया गया। इससे शिक्षक–विद्यार्थियों में गांधी शिक्षा दर्शन की एक समझ विकसित हुई।

प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षक–विद्यार्थियों को बुनियादी शिक्षा आधारित पाठ योजना निर्माण के संदर्भ में बी.एड. के पाठ्यक्रम के अनुसार सूक्ष्म शिक्षण का प्रशिक्षण दिया गया। इस प्रशिक्षण में बुनियादी तालीम के विचार के संदर्भ में स्कूली शिक्षा के कक्षा शिक्षण में आधारभूत कौशलों, पाठ योजना निर्माण, अनुबन्ध के सिद्धान्त पर शिक्षक–विद्यार्थियों को अभ्यास दिया गया। इस अभ्यास में विद्यार्थी–शिक्षकों ने विभिन्न विषयों के प्रकरणों पर आधारित सूक्ष्म शिक्षण की योजनाओं का निर्माण किया। इस कार्यक्रम में अध्यापक शिक्षकों ने अन्तः अनुशासनिक (समवाय) भाषा, इतिहास, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र आदि के संदर्भ में आदर्श पाठ योजनाओं का प्रस्तुतीकरण किया। इस कार्यक्रम के माध्यम से शिक्षक–विद्यार्थियों ने बुनियादी शिक्षा के अनुबन्ध के सिद्धान्त पर कक्षा शिक्षण के लिए पाठ योजनाएं बनाने का कौशल प्राप्त किया।

गांवों के स्थानीय विद्यालयों में कक्षा शिक्षण का अभ्यास व अनुभव देने के लिए विद्या भवन गांधी शिक्षा अध्ययन संस्थान के शिक्षक–विद्यार्थियों को बुनियादी तालीम पर आधारित किन्हीं दो विषयों में 15–15 पाठ योजनाएं पढ़ाने का अभ्यास दिया गया। इस अभ्यास के अन्तर्गत शिक्षक–विद्यार्थियों ने संदर्भित 20 विद्यालयों में बुनियादी शिक्षा के समवाय के सिद्धान्त के आधार पर हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, गणित, पर्यावरण अध्ययन, विज्ञान, अर्थशास्त्र, इतिहास आदि विषयों का शिक्षण करने की कोशिश की। इस अभ्यास वर्ग के दौरान शिक्षक–विद्यार्थियों ने पाठ योजनाओं का निर्माण कर कक्षा शिक्षण में उनका उपयोग किया। इस अभ्यास वर्ग से शिक्षक–विद्यार्थियों का आत्मविश्वास बढ़ा और उनकी बुनियादी तालीम के बारे एक

सोच बनी।

इस प्रशिक्षण में, ब्लॉक प्रेक्टिस टिचिंग कार्यक्रम के तहत संस्थान के शिक्षक–विद्यार्थियों को चित्तौडगढ़ और राजसमन्द जिलों में स्थित सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में पूर्णकालिक रूप से (पूरे दिन) कक्षा अध्यापन करने का अभ्यास दिया गया। इस दस दिवसीय अभ्यास में शिक्षक–विद्यार्थियों ने विद्यालय संगठन व प्रशासन समाज व अभिभावकों और विद्यार्थियों की पृष्ठभूमि, स्थानीय परिस्थितियां आदि का अध्ययन किया और साथ ही संक्षिप्त पाठ योजनाओं के आधार पर कक्षा शिक्षण करने का कार्य किया। इस कार्यक्रम के जरिए शिक्षक–विद्यार्थियों को स्कूल की परिस्थितियों, स्थानीय समुदाय एवं विद्यार्थियों को समझने का मौका मिला।

ग्राम शिविर में गांधीजी के 'हिन्दस्वराज' की अवधारणा के संदर्भ में शिक्षक–विद्यार्थियों को ग्रामीण परिदृश्य का अनुभव व समझ देने के लिए संस्थान द्वारा पांच दिवसीय ग्रामीण शिविर का आयोजन किया गया। वर्ष 2010 में यह ग्रामीण शिविर 'विश्वमंगलम्' अनेरा गांव, तहसील हिम्मतनगर, गुजरात में लगाया गया था। इस शिविर में शिक्षक–विद्यार्थियों ने 4 गांवों का गांधीजी की पुस्तक 'हिन्दस्वराज' के प्रकाश में स्थानीय स्वशासन, जीविकोपार्जन व आर्थिक परिस्थिति, सामाजिक–सांस्कृतिक स्वरूप, स्थानीय भौगोलिक परिस्थिति (पर्यावरण) एवं शिक्षा की स्थिति का अध्ययन किया। शिविर में इस अध्ययन की शिक्षक–विद्यार्थियों के द्वारा समूहवार रिपोर्ट तैयार की गई और उसका दस्तावेजीकरण किया गया। अध्ययन के निष्कर्षों की एक एकीकृत रिपोर्ट बनाई गई। शिविर के अंत में शिक्षक–विद्यार्थियों के द्वारा किए गए काम की प्रदर्शनी लगाई गई थी, जिसका गांव वालों ने अवलोकन किया। इस शिविर में सारी व्यवस्थाओं का प्रबन्धन–स्वावलम्बन, सहयोग, श्रम के प्रति निष्ठा आदि के सिद्धान्तों पर शिक्षक–विद्यार्थियों के द्वारा किया गया था। इस शिविर के माध्यम से शिक्षक–विद्यार्थियों को गांधी चिन्तन व ग्रामीण स्वराज के वास्तविक स्वरूप से रूबरू कराया गया।

विद्या भवन गांधी शिक्षा–अध्ययन संस्थान के शिक्षक–विद्यार्थियों को प्रशिक्षण के दौरान विद्या भवन बेसिक स्कूल की उद्योग कार्यशालाओं में खाद्य प्रसंस्करण, सुथारी, सिलाई, घरेलू विद्युत उपकरण मरम्मत व रख रखाव एवं हस्तनिर्मित कागज़ बनाने का काम सिखाया गया। इन कामों के अन्तर्गत शिक्षक–विद्यार्थियों ने अचार, मुरब्बा, पाचक पदार्थ, जेम जैली, फोटो फ्रेम, बैठने का पटिया, क्रिकेट बल्ला, धोवना, अगरबत्ती स्टेण्ड, शर्ट, झबला, ब्लाऊज, फिरॉक, सलवार–कुर्ता, स्विच बोर्ड, सर्किट, कागज़ शीट, लिफ़ाफे, फोल्डर, डायरी, फाईल, कार्ड, आदि बनाने का काम किया। इन कामों का प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले शिक्षक–विद्यार्थियों ने सामग्री निर्माण के आवश्यक कौशलों को अर्जित किया। शिक्षक–विद्यार्थियों ने हाथों के कामों से उनके कक्षा–शिक्षण के अभ्यास के लिए सहायक शिक्षण सामग्री तैयार की एवं उनका शिक्षण में उपयोग किया। इस गतिविधि से शिक्षक–विद्यार्थियों में काम से ज्ञान का निर्माण, स्वावलम्बन, श्रम के प्रति निष्ठा, सहयोग आदि मूल्यों को विकसित करने की कोशिश की गई।

हमारी दृष्टि में हमारे द्वारा शुरू किए गए इस प्रशिक्षण कार्यक्रम की निम्नलिखित उपलब्धि रही है–

- एक लम्बे अर्से के बाद गांधीजी की बुनियादी तालीम के विचार को पुनः अपनाने के संदर्भ

में शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम की शुरुआत हुई।

- सामान्य शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रथम बार शिक्षक–विद्यार्थियों को हाथों का काम (उद्योग कार्य) सिखाने का कार्य शुरू हुआ।
- शिक्षक–विद्यार्थियों को प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत गांवों के स्थानीय परिवेश का अनुभव देने के लिए ग्रामीण शिविर का आयोजन।
- बी.एड. के कोर्स में प्रथम बार शिक्षक–विद्यार्थियों के लिए एक विशिष्ट विषय के रूप में बुनियादी शिक्षा दर्शन का प्रश्न–पत्र अनिवार्य होना।

स्कूलों के लिए बुनियादी तालीम में प्रवीण व प्रशिक्षित शिक्षक तैयार करने की दिशा में हमारा यह एक प्रारम्भिक और छोटा प्रयास है। इस प्रयास में हमें कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा और विभिन्न मुद्दों से जूझना पड़ा है। अभी भी हमारे सामने कई बाधाएं हैं, जिनका हमें हल खोजना है। बुनियादी तालीम के सिद्धान्तों और तत्वों को शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में शामिल करने और इस प्रकार के शिक्षक प्रशिक्षण के संचालन में हमारे सामने प्रमुख चुनौतियां, जो हमें दिखाई देती हैं, वे हैं–

- बुनियादी तालीम के दर्शन पर आधारित शिक्षक प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम तैयार करना।
- बुनियादी तालीम में प्रवीण व कुशल अध्यापक–शिक्षकों की उपलब्धता।
- पाठ्यक्रम के लिए एन.सी.टी.ई. से मान्यता प्राप्त करना।
- इस पाठ्यक्रम और कोर्स का विश्वविद्यालय के द्वारा अनुमोदन और संबंद्धता प्राप्त करना।
- शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में शिक्षक विद्यार्थियों के लिए हाथ के कामों का (उद्योग) प्रबन्धन करना।
- बुनियादी तालीम के शिक्षण में समवाय के सिद्धान्त को गहराई से समझना।

बुनियादी शिक्षा के इस एक वर्षीय शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के तहत पिछले तीन वर्षों में लगभग 280 शिक्षक तैयार हुए हैं, जो किसी भी स्कूल में बुनियादी तालीम की शिक्षा का कार्य कर सकते हैं। लेकिन फिर भी हम इस प्रशिक्षण को पूरी तौर से बुनियादी तालीम का शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम नहीं कह सकते। क्योंकि इस कार्यक्रम में, वे बातें या आयाम शामिल नहीं हो पा रहे हैं जो कि बुनियादी तालीम की वास्तविक छवि को प्रस्तुत कर सके, जैसा गांधीजी ने सोचा था। हम उम्मीद करते हैं कि आसन्न चुनौतियों से रूबरू होते हुए हम इस दिशा में कुछ आगे बढ़ पाएंगे।

शिक्षा की बुनियाद व खोजें और जानें पत्रिकाओं के संपादन प्रभारी, विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, उदयपुर में कार्यरत।

पुस्तक समीक्षा

भारत में अंग्रेज़ी की समस्या, परतें खोलती एक किताब

कालू राम शर्मा

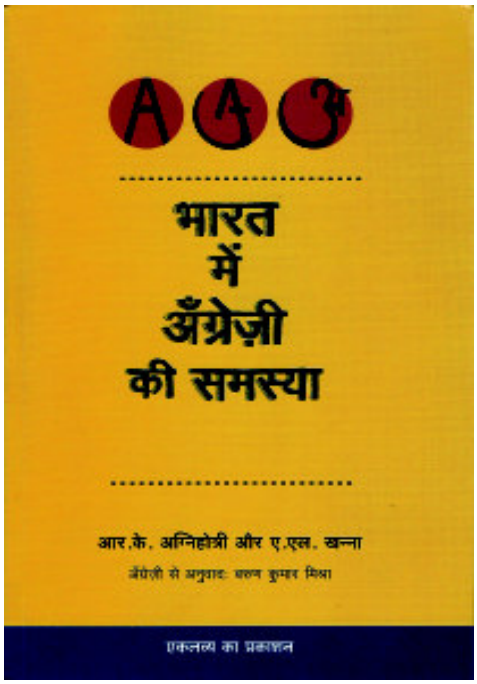

प्रकाशक : एकलव्य

लेखक : आर.के. अग्निहोत्री, ए.एल. खन्ना

अंग्रेजी से अनुवाद : बरुण कुमार मिश्रा

संपादन : रुस्तम सिंह

कीमत : 90 रुपए

आज की तारीख में कौन नहीं चाहता अपने बच्चों को अंग्रेजी स्कूल में पढ़ाना! दरअसल, यह कहना गलत नहीं होता दिखता कि आज अंग्रेज़ी का जमाना है। युवा चाहते हैं कि फर्राटेदार अंग्रेज़ी बोलें। मगर यह इतना आसान तो नहीं। एक तरफ बच्चे स्कूल की देहलीज़ में पांव रखने को होते हैं और उन्हें अंग्रेज़ी माध्यम स्कूलें अंग्रेज़ी बोलने को मजबूर कर देती हैं। सरकारी स्कूल के बच्चे, चाहे अंग्रेज़ी न पढ़ रहे हों, मगर उनके अभिभावकों में भी यह छटपटाहट महसूस की जा सकती है। इस उहापोह में वे न तो अंग्रेज़ी में बोल–सीख पाते हैं और न ही अपनी मातृभाषा में संवाद कर पाते हैं। यह तस्वीर हमारे देश में अमूमन देखने को मिलती है। यह एक द्वंद्व है भाषा के माध्यम को लेकर। भाषायी द्वंद्व और भी कई हैं। एक तरफ मातृभाषा की अवहेलना और अंग्रेज़ी का दबाव। आखिर बच्चे और उनके अभिभावक करें तो क्या। दरअसल, यह समस्या केवल छोटे बच्चों के स्तर पर ही नहीं बल्कि किशारों और वयस्कों के स्तर पर भी उतनी ही ज्वलंत है।

अगर आप भारत के परिदृश्य में इन सब मसलों को समझना चाहते हैं, तो हाल ही में एकलव्य द्वारा प्रकाशित पुस्तक "भारत में अंग्रेज़ी की समस्या" को ज़रूर पढ़िए। प्रो. आर. के. अग्निहोत्री एवं प्रो. ए.एल खन्ना द्वारा लिखित यह पुस्तक बहुभाषी विविधता वाले भारत में अंग्रेज़ी की समस्याओं की परत–दर–परत खोलती जाती है। शिक्षा की शुरुआती पायदान पर मातृभाषा की प्रमुखता और उच्च शिक्षा में अंग्रेज़ी का महत्त्व, दोनों की ही अपनी अहमियत है। अहम बात यह भी है कि ज्यादातर लोग अंग्रेजी बोलने–लिखने में प्रवीणता हासिल तो करना चाहते हैं मगर इसकी भी कई गहरी वजहें हैं, जिनका जिक्र इस किताब में

मिलेगा। सात शहरों में किए सर्वेक्षण के आधार पर यह किताब भारत में अंग्रेज़ी की स्थिति व उसकी भूमिका की तफ्तीश करती है। साथ ही यह किताब अंग्रेज़ी का इस्तेमाल करने वालों की ज़रूरतों तथा रवैयों की तस्वीर भी पेश करती है। लेखक ये देखने की कोशिश करते हैं कि बुजुर्ग तथा युवा लोग कल के भारत में अंग्रेज़ी की क्या कल्पना करते हैं।

यह किताब इस रूप में किस प्रकार से आई, इसकी भी अपनी कहानी है। यह पुस्तक अंग्रेज़ी में प्रॉब्लेमेटाइज़िंग इंग्लिश इन इंडिया का लघु संस्करण कहा जा सकता है। लेखक ने 1995 में ब्रिटिश काउंसिल, नई दिल्ली के सौजन्य से एक रिपोर्ट लिखी थी जो "भारत में अंग्रेज़ी: सामाजिक–भाषात्मक और सामाजिक–मनावैज्ञानिक दृष्टिकोण (एक प्रायोगिक अध्ययन)'' शीर्षक से जानी जाती है। इस कार्य का मकसद भारत में अंग्रेज़ी के हालात, उसकी भूमिका तथा कार्यों का पता लगाना था। इसकी अभिकल्पना कुछ इस प्रकार से की गई थी कि भारत में अंग्रेज़ी तथा अंग्रेज़ी बोलने वालों के प्रति अभिवृत्तियों तथा उनकी रूढ़ छवियों को ज़रा विस्तार से उजागर किया जा सके। इसका एक मकसद यह भी था कि भारत के विभिन्न हिस्सों में अंग्रेज़ी सीखने वालों के संदर्भ में माता–पिता कैसे सोचते हैं। एक बात और महत्वपूर्ण है कि अंग्रेज़ी सीखना तो सभी चाहते हैं मगर इसको लेकर घबराहट भी व्याप्त है। इस अध्ययन के माध्यम से लेखक इस घबराहट के पैटर्न को जानने की इच्छा भी रखते हैं।

लेखक प्रस्तावना में ही यह स्पष्ट कर देते हैं कि वे आखिर इस यात्रा में करना क्या चाहते हैं। इस पुस्तक का एक अहम हिस्सा है अंग्रेज़ी के ऐतिहासिक, सामाजिक व राजनैतिक पक्षों का अध्ययन तथा इस कार्य की पृष्ठभूमि में इस विषय पर उपलब्ध दस्तावेजों का निरीक्षण करना। दरअसल इस किताब का आधार ही यह अध्ययन है जो बहुभाषिता व बहुआयामी सामाजिक–मनोवैज्ञानिक दायरे में किया गया है। लेखक ने अंग्रेज़ी की समस्या और इससे जुड़े पहलुओं को समझने के लिए शहरी क्षेत्र को सीमित मानकर एक बड़ा नमूना चुना।

भारत की भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए लेखक इसे सात हिस्सों में विभाजित कर 1128 लोगों से अंग्रेज़ी भाषा के विभिन्न पहलुओं पर संवाद करते हैं। इस योजना में प्रत्येक राजधानी से 150 उत्तरदाताओं यानी सात शहरों से 1050 का लेने का मानस था। इनमें से 30 उच्च आयु वर्ग से तथा 10–10 उच्च–मध्यम वर्ग तथा निम्न वर्ग के रिहायशी क्षेत्रों से लेने की योजना थी। 120 युवा उत्तरदाताओं में से 60 कक्षा 11 वीं या 12वीं पढ़ने वाले स्कूली छात्र–छात्राएं तथा 60 महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों से थे।

बेशक, यह किताब उन शैक्षिक शोध में दिलचस्पी रखने वालों के लिए शोध की तस्वीर की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए शोध की विधि एवं विश्लेषण करने का एक आईना पेश करती है। साथ ही शोध के दौरान अपनाई गई रणनीतियां और सामने आई समस्याओं की बारीकियों पर भी रोशनी डालती है। शोध के लिए तैयार की गई प्रश्नावलियों को किताब में परिशिष्ट के रूप में छापा गया है।

लेखक इस पूरे मामले को गहरे परिप्रेक्ष्य में देखने की कोशिश करते हैं। किसी भी देश में किसी भी भाषा की सार्थक छानबीन भाषा और बहुभाषिता की समस्याओं तथा समाज में सत्ता से संबंधों को नहीं समझा जाता। दरअसल, भाषा को आमतौर

पर एक "मानक'' भाषा का पर्याय माना जाता है। मानक भाषा को सामान्यतया एक ऐसी औपचारिक व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसके अपने नियम व शब्द संग्रह होते हैं तथा जिसका इस्तेमाल किसी बोलचाल समुदाय के सदस्यों के बीच संवाद हेतु किया जाता है। भाषा केवल औपचारिक व्यवस्था या संवाद का माध्यम भर ही नहीं वरन पहचान चिह्न भी है और यह भूमिका संवाद से ज्यादा ताकतवर होती है। बेशक, भाषा ही तो है जो इंसानों को अन्य जीवों से अलग करती है। इसी खंड में बहुभाषिता के संदर्भ में एक सर्वव्यापी समस्या की ओर ध्यान खींचा जाता है कि मानक भाषा को लेकर तो व्याकरण, शब्दकोश और संदर्भ पुस्तकों का निर्माण किया जाता है मगर बोलियों को लेकर यह दोगला बर्ताव क्यों? भाषा विज्ञान कहता है कि सारी भाषाएं नियम से बंधी हुई हैं तथा उनमें हर प्रकार के सामाजिक संदर्भों को संभालने की ताकत होती है। जो सत्ता जिस भाषा का इस्तेमाल करती है, वही सबसे प्रमुख बनकर मानक बन जाती है। यह सवाल और भी अहम हो जाता है कि कैसे विश्व स्तर पर एक भाषा सत्ता व प्रतिष्ठा से जुड़ जाती है और व्यापार, व्यवसाय व ज्ञान और यहां तक कि विद्रोह के लिए भी इतनी आवश्यक बन जाती है कि अत्यंत जागरूक लोग भी इन उद्देश्यों के लिए अपनी भाषा के उपयोग की व्यावहारिकता को लेकर शंकित होने लगते हैं।

पुस्तक का दूसरा अध्याय भारत में अंग्रेज़ी के आगमन की गाथा का बयां करते हुए भारत में अंग्रेज़ी भाषा का महत्व किस तरह बढ़ता गया, इस पर केंद्रित है। उन्नीसवीं व आरंभिक बीसवीं सदी में शिक्षा के क्षेत्र में हुए अधिकतर प्रयासों में अंग्रेज़ी भाषा, साहित्य व संस्कृति को ही वरियता दी गई तथा अंग्रेज़ी भाषा में पश्चिमी ज्ञान को ही प्रायः ज्ञान का पर्याय माना गया। हालांकि अंग्रेज़ी को लेकर विद्रोह के स्वर भी सुनने को मिलते हैं। ये स्वर ज़ाकिर हुसैन समिति समेत राष्ट्रीय आंदोलन में सुनाई देते हैं। उल्लेखनीय है कि ज़ाकिर हुसैन समिति गांधी की नई तालीम और उसके प्रभाव से प्रेरित थी। गांधी की नई तालीम की अवधारणा में प्रमुख बातें जो थीं, वे सामाजिक उपयोग की वस्तुओं के उत्पादन पर केंद्रित थीं। दरअसल यह अवधारणा कारगर व लोकप्रिय नहीं हो सकी। मगर एक बात ज़रूर हुई, वह यह कि गांधी की नई तालीम का मूल मंत्र 'मातृभाषा में शिक्षा' को खासी तव्वजौह मिली। ज़ाकिर हुसैन समिति की सिफारिश को यहां हूबहू प्रस्तुत करना लाजिमी होगाः

'मातृभाषा का उपयुक्त शिक्षण ही समस्त शिक्षा का मूल आधार है। प्रभावपूर्ण तरीके से बोलने तथा सही व स्वच्छ तरीके से पढ़ने व लिखने की क्षमता के बगैर कोई भी व्यक्ति चिंतन की सटीकता व विचारों की स्पष्टता विकसित नहीं कर सकता। इसके अलावा यह शिशु को उसकी परंपरा के विचारों, भावनाओं व आकांक्षाओं की समृद्ध विरासत से परिचित कराने का तरीका है। अतः इसे सामाजिक शिक्षा और साथ में नैतिक मूल्य स्थापित करने का कीमती साधन बनाया जा सकता है। यह बच्चे के सौंदर्य बोध की अभिव्यक्ति व रसास्वादन का प्राकृतिक माध्यम भी है, और यदि सही तरीका अपनाया जाए तो साहित्य का अध्ययन सृजनात्मक रसास्वादन व आनंद का ज़रिया बन सकता है।'

भारत में अंग्रेज़ों के साथ–साथ अंग्रेज़ी का विरोध भी हुआ मगर फिर भी भारत के निहायत ही बुद्धिमान समझे जाने वाले लोग अंग्रेज़ी भाषा व

साहित्य की श्रेष्ठता के कायल थे। इसके विपरित गांधी ने सत्याग्रह, दांडी यात्रा या भारत छोड़ो आंदोलन के लिए जनमानस तक पहुंचने के प्रयास किए, तो उन्होंने लोगों से उनकी भाषा में बात की। गांधी की इस बात पर गौर फरमाया जाए जो उन्होंने अपनी मृत्यु के कुछ दिनों पहले 1948 में कही:

'यदि प्रांतीय भाषाओं का पूर्ण रूप से विकास करना है, तो प्रांतों को भाषाई आधार पर विभाजित करना होगा। हिंदुस्तानी, हिंदुस्तान की जन भाषा – राष्ट्र भाषा – होगी, पर यह प्रांतीय भाषाओं की जगह नहीं ले सकती। यह प्रांतों में शिक्षा का, माध्यम नहीं हो सकती, अंग्रेज़ी तो बिल्कुल नहीं।'

इन सबके बावजूद स्वतंत्रता पूर्व ही अंग्रेज़ी का महत्त्व बढ़ता गया। अंग्रेज़ी स्कूल और कॉलेज तेज़ी से फैलते गए। लेखक इस बात को बड़े अच्छे से उजागर करते हैं कि एक तरफ अंग्रेज़ी नवीन सूचना व ज्ञान हासिल करने का सशक्त औजार बनी। वहीं देश के विभिन्न भागों के स्वतंत्रता सेनानियों के बीच ज्ञान का साझा पुंज व संचार का साझा माध्यम बन गई। वे शासकों की भाषा का उपयोग कर उनके शासन तंत्र में सेंध भी लगा सकते थे। यह स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं के लिए औपनिवेशिक साज़िशों को उजागर करने व उन पर प्रहार करने के लिए आवश्यक थी। अंग्रेज़ी ही पत्रकारिता, प्रशासन व न्यायालय के क्षेत्रों में ताकतवर भाषा बन गई। सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि अंग्रेज़ी भारतीय बहुभाषाई खज़ाने में एक नई ज़ुबान के रूप में जुड़ गई, हालांकि एक ऐसी ज़ुबान जो न तो भारतीय ज़मीन से उपजी थी न ही शायद कभी उस ज़मीन में जड़ें जमा सकती थी।

उक्त अध्ययन बताता है कि अंगेज़ी भाषा के औपनिवेशीकरण तथा शोषण से गहरे इत्तेफाक़ के बावजूद अंग्रेज़ी भारतीय समाज में अहम भूमिका निभाती दिखती है। दिलचस्प बात यह कि 70 फीसदी उत्तरदाता मानते हैं कि अंग्रेज़ी भारतीय भाषा है। अंग्रेज़ी भाषा के बगैर उच्च शिक्षा व तकनीकी विकास की कल्पना करना संभव नहीं। हालांकि तस्वीर का दूसरा पहलू यह है कि अंग्रेजी के सत्ता के साथ एकछत्र रिश्ते को दुःखद मानते हैं।

पुस्तक के एक अध्याय "संभ्रात विचार" में कई लोगों ने अंग्रेज़ी को ज़रूरी माना है। वे यह भी मानते हैं कि अंग्रेजी को सही ढंग से पढ़ाना चाहिए। बहरहाल, यहां इस खंड से कुछ विचार जस के तस प्रस्तुत हैं:

अंग्रेज़ी की पैरवी करते हुए प्रो. अमिताभ बसु कहते हैं :*एक विषय के रूप में पढ़ाना चाहिए तथा यदि व्यावहारिक हो तो इसे शिक्षण माध्यम भी बनाना चाहिए। अंग्रेज़ी न्यायपालिका, प्रशासन व अकादमिक संस्थानों की भाषा है। इस माध्यम को बदलने की बजाय हमें यह माध्यम जनता तक ले जाना चाहिए।*

कई लोगों का विचार है कि जिन छात्रों को मातृभाषा में पढ़ाया जाता है, वे अंग्रेज़ी माध्यम स्कूलों के छात्रों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं। हैदाराबाद के एक अंग्रेज़ी शिक्षक ने कहा:

'सामान्यतया भारतीय भाषा स्कूल के छात्र अंग्रेज़ी माध्यम स्कूल के छात्रों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं, क्योंकि अंग्रेज़ी माध्यम के छात्रों को मात्र विषयवस्तु ही नहीं पकड़नी होती बल्कि साथ ही साथ एक विदेशी भाषा भी सीखनी होती है।'

एक बात तो साफ है कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा

में ही होनी चाहिए। मगर दूसरी और इंसान की बहुभाषिता प्रवृति के संदर्भ में एक से अधिक भाषा में शिक्षा का ताना–बाना बुनना चाहिए। ताज़े अनुसंधानों ने बहुभाषिता के संदर्भ में पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध कराए हैं। भारतीय भाषा के साथ अंग्रेज़ी होनी चाहिए। कोई भी भाषा थोपनी नहीं चाहिए। गैर हिंदी भाषाई क्षेत्रों में हिंदी एक थोपी हुई भाषा ही कही जाएगी। अंग्रेज़ी भाषा को लेकर एक आवाज़ इस पुस्तक में सुनाई देती है और वह यह कि आखिर अंग्रेज़ी कब शुरू की जाए। इसको लेकर कोई एक मत होता दिखाई नहीं देता। मगर इतना ज़रूर समझ में आता है कि सीखने की प्रक्रिया समृद्ध रूप से परिवेश में रची–बसी हो। अंग्रेज़ी को स्कूल में लागू कर देने भर से ही बात नहीं बनने वाली। आज अगर हम देखें, तो स्कूलों के पास अंग्रेज़ी के बेहतर शिक्षक नहीं है न ही बच्चों के लिए और शिक्षकों के लिए अंग्रेज़ी में सीखने–सिखाने की सामग्री।

पुस्तक कई मायनों में शिक्षकों, शिक्षा में कार्यरत साथियों एवं भाषायी दिलचस्पी रखने वालों को खासकर बहुभाषिता, अंग्रेज़ी एवं भारतीय भाषाओं पर सटीक ढंग से सोचने का उपकरण उपलब्ध कराती है। पुस्तक में अनेक भाषाशास्त्रियों व विद्वानों के विचारों व तथ्यों को हुबहू पेश किया गया है। पुस्तक भाषा की कई पैचिदगियों को भी पेश करती चलती है।

ऐसा प्रतीत होता है कि अंग्रेजी की बनिस्बत हिन्दी में यह दस्तावेज कहीं अधिक बेहतर ढंग से सामने आया है। अनुवाद जितना सटीक ढंग से हुआ उतनी ही सटीकता से इस दस्तावेज का संपादन भी हुआ है। पुस्तक को बेहतर स्वरूप प्रदान करने का श्रेय लेखक द्वय रुस्तमसिंह को देते हैं। लेखक द्वय ने पुस्तक की रायल्टी एकलव्य को बच्चों के शैक्षिक कार्य को भेंट की है। दरअसल एकलव्य को रायल्टी भेंट करने की परंपरा चौमस्की ने शुरू की थी जिनकी एक किताब का संपादन लेखक द्वय प्रो. रमाकांत अग्निहोत्री एवं प्रो. ए.एल. खन्ना ने किया था।

शिक्षा की बुनियाद पत्रिका की सपांदन टीम के सदस्य, अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, देहरादून में कार्यरत।

वर्कशीट

मिट्टी

यशोधरा कनेरिया

पानी और हवा की तरह ही मिट्टी भी एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक घटक है। मिट्टी का उपयोग हम कई तरह से करते हैं, जैसे घर बनाने में, फसले उगाने के लिए, बर्तन, खिलौने बनाने के लिए चूल्हा बनाने में आदि। सिर्फ हमारे लिए ही नहीं बल्कि अन्य जीवों के आवास के रूप में भी मिट्टी उपयोगी है।

मिट्टी और जीवन

जीव जगत के लिए भी मिट्टी की उतनी ही उपयोगिता है या यूं कह सकते हैं कि उनका तो जीवन ही मिट्टी से जुड़ा है। आइए, एक गतिविधि के माध्यम से मिट्टी और जीवन के संबंध को समझने की कोशिश करते हैं।

इस गतिविधि को करने के लिए अपनी कक्षा में 5–6 विद्यार्थियों का समूह बना लीजिए। इसके पश्चात् अलग–अलग समूह अलग–अलग स्थानों पर जाकर वहां की मिट्टी का अध्ययन करेंगे। इसके लिए आप निम्न स्थानों पर जा सकते हैं–

खेत, तालाब के किनारे, सड़क के किनारे, बगीचा, खुला मैदान आदि।

ध्यान रहे कि फील्ड में जाने से पहले ही यह सुनिश्चित कर लें कि कौनसा समूह कहां पर जाएगा। साथ ही अपने साथ एक झोले में हैंड लेंस, मिट्टी खोदने के लिए खुरपी या कोई नुकीली वस्तु, अखबार, रबर, स्केल व अपनी नोटबुक में नीचे बना चार्ट ले जाना न भूले। नीचे दिए गए जीवन चार्ट का जो तरीका अपनाना है, वह आगे दिया गया है। यह चार्ट पहले अपनी कॉपी में नोटकर लें।

मिट्टी का जीवन चार्ट

आपको अपने फील्ड/साईट पर जो भी चीज़ें मिले उस पर सही का निशान लगाइए। अन्य कोई नाम जोड़ना है, तो उसे भी जोड़ सकते हैं।

साईट का नाम ——————————

खण्ड 1 – पौधे

मैंने देखा –

1. मिट्टी में
   कोई जड़ नहीं मिली ☐,
   ——————————
   कुछ जड़ें मिली ☐,
   ——————————
   बहुत ज्यादा जड़ें मिली ☐
   ——————————
2. छोटे–छोटे पौधे मिले जैसे कि ———
   ——————————
3. कुछ अन्य तरह के पौधों के निशान या अवशेष मिले ——————————
   ——————————

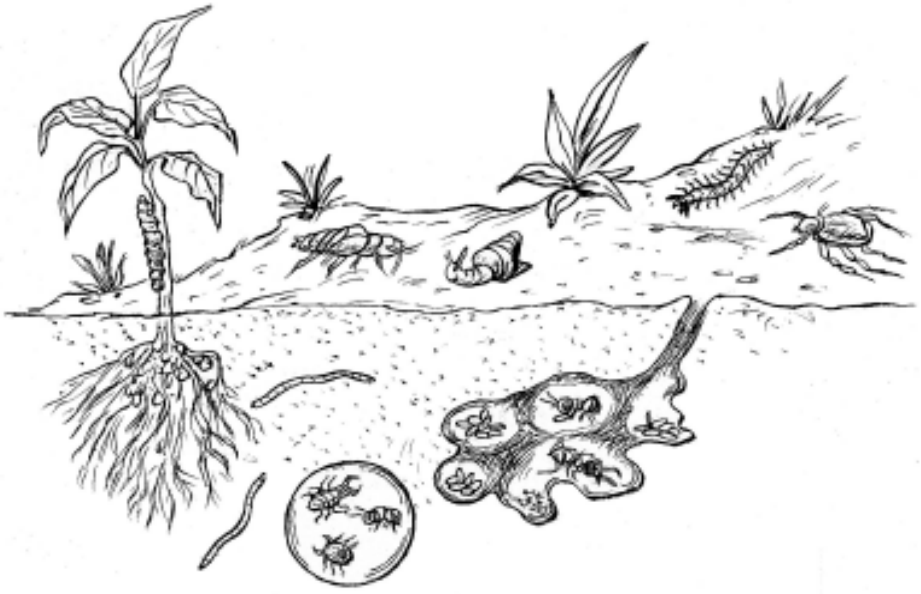

खण्ड – 2 जीव–जन्तु

मैंने देखा –

1. विभिन्न प्रकार के कीड़े जैसेकि

   केंचुआ, जिसके कोई पैर नहीं हैं ☐

   ————————————————————

2. विभिन्न प्रकार के कीड़ें–मकोड़े जिनके तीन जोड़ी टांगें थीं। ☐ ————————————
   ————————————————————

   जिनके चार जोड़ी टांगें थीं ☐ ————————
   ————————————————————

   जिनकी चार से अधिक जोड़ी टांगें थीं
   ☐————————————————————
   ————————————————————

3. विभिन्न प्रकार के घोंघे ☐
   ————————————————————

4. कीड़ों के अंडे, लार्वा ☐

5. अन्य जीव–जन्तु ————————————
   ————————————————————

   (नोट – अध्ययन करने के बाद इन जीवों को पुनः मिट्टी में छोड़ दें)

प्रक्रिया

1. साईट पर जाकर लगभग 30 सेमी X 30 सेमी की जगह को निशान लगाकर चिह्नित कर लीजिए।

2. साईट पर अगर पत्तियों की परत हो, तो उसे सावधानीपूर्वक हटाइए और यदि आपको कोई जीव–जन्तु मिले, तो उन्हें चार्ट में नोट कीजिए।

3. मिट्टी को 4–6 सेमी की गहराई तक खोदिए और उसमें जड़ों की उपस्थिति का अवलोकन कीजिए। अपने अवलोकनों को चार्ट में रिकॉर्ड कीजिए।

4. मिट्टी की कुछ मात्रा को लेकर अखबार के

कागज पर फैलाइए।

5. अखबार पर फैलाई हुई मिट्टी को हैंड लेंस की मदद से बारीकी से अवलोकन कीजिए। अवलोकन के दौरान पाए जाने वाले जीवों, उनके अंडों या अन्य कोई जानकारी को चार्ट में रिकॉर्ड कीजिए। आपकी मदद के लिए यहां पर एक चित्र भी दिया गया है।

नोट : प्रत्येक समूह अपनी साईट से एक झोले में लगभग 250 ग्राम मिट्टी लेते हुए विद्यालय पहुंचे।

विद्यालय लौटने के बाद सभी समूहों के चार्ट की तुलना कीजिए और बताइए–

- किस समूह की साईट पर सबसे अधिक जीव पाए गए।
- क्या मिट्टी में पाए जाने वाले जीवों व उनके बिलों की संख्या का, वहां की मिट्टी की परिस्थितियों के बीच कोई संबंध हो सकता है? कारण बताइए।
- उपर्युक्त गतिविधि के आधार पर समझाइए कि मिट्टी एक आवास है।

हवा और पानी के समान ही मिट्टी भी हमारे जीवन में इस तरह घुल–मिल गई है कि हम इसकी तरफ ध्यान तक नहीं देते। बस, उसका उपयोग किए जाते हैं।

मिट्टी के उपयोग की सूची बनाइए।

यदि कक्षा के सभी विद्यार्थियों द्वारा बनाई गई सूचियों को जोड़ दिया जाए, तो आपको दिखेगा कि मिट्टी के अनेक उपयोग हैं।

क्या हर मिट्टी का हर काम के लिए उपयोग हो सकता है? उदाहरण के लिए क्या हर तरह की मिट्टी घड़े (मटके या सुराही) बनाने के काम आ सकती है? इसी तरह से आपने सुना होगा कि खास फसलों और पेड़–पौधों के लिए, खास तरह की मिट्टी की आवश्यकता होती है।

कुछ और इसी प्रकार के उदाहरण दो, जिससे मालूम पड़ सके कि खास उपयोगों के लिए अलग–अलग प्रकार की मिट्टी की जरूरत होती है।

किसी मिट्टी का कौन से काम में उपयोग किया जा सकता है, यह उसके गुणों पर निर्भर है। आप भी अगले पेज पर बॉक्स में दिए गए प्रयोग की सहायता से मिट्टी के गुणों को और अलग–अलग प्रकार की मिट्टियों के बीच अंतरों को समझ सकते हैं।

प्रयोग

थोड़ी–सी मिट्टी लीजिए। इसके डलों को कूट–कूट कर चूरा बना लीजिए। अब एक गिलास या उफननली में तीन चौथाई पानी भरकर उसमें आधी मिट्टी डाल दीजिए। किसी डंडी से हिलाकर मिट्टी को अच्छी तरह से घोल दीजिए। अब इसको आधे घंटे के लिए बिना हिलाए–डुलाए रखा रहने

नीचे के रेखा चित्र के आधार पर मिट्टी के प्रकार का पता लगाओ।

क्या आसानी से गेंद बन गई?

नहीं

मिट्टी रेत है।

हां

मिट्टी रेतीली दोमट, हल्की दोमट, भारी दोमट, हल्की चिकनी या चिकनी मिट्टी हो सकती है।

गेंद से बेलन बनाने की कोशिश करो। क्या बेलन बन गया?

नहीं

मिट्टी रेतीली दोमट है।

हां, किन्तु बेलन की लम्बाई कम है।

मिट्टी हल्की दोमट है।

हां (यदि बेलन की लंबाई 15 सेमी. हो।

मिट्टी भारी दोमट, हल्की चिकनी या चिकनी मिट्टी हो सकती है।

बेलन को मोड़कर वृत्त बनाने की कोशिश करो।

नहीं मुड़ता

मिट्टी दोमट है।

केवल अर्धवृत्त ही बनता है

मिट्टी भारी दोमट है।

दरारों वाला वृत्त बनता है।

हल्की चिकनी मिट्टी है।

पूरा वृत्त बनता है।

चिकनी मिट्टी है।

दीजिए। इसके बाद इसका अवलोकन करके निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

क्या गिलास/उफननली में अगल–अलग साइज के कणों की परतें दिखती हैं?

इन परतों के ऐसे चित्र बनाइए जिनमें परतों की लगभग ऊंचाई भी लिखी हो।

अपनी मिट्टी की परतों की तुलना अन्य टोलियों की मिट्टियों से कीजिए। अंतर व समानता अपने शब्दों में लिखिए।

आपने परिभ्रमण के दौरान जमीन की कटानों के चित्र बनाए थे। उन चित्रों के ऊपर के चित्र की तुलना कीजिए।

ऊपर के प्रयोग में आपने देखा कि मिट्टी अलग–अलग आकार (साइज) के कणों से मिलकर बनती है। अलग–अलग मिट्टी में विभिन्न कणों की मात्रा भिन्न–भिन्न होती है। इन्हीं मात्राओं के आधार पर मिट्टी का वर्गीकरण किया जाता है। यदि मिट्टी में बड़ी साइज के कणों की मात्रा ज्यादा हो, तो उसे रेतीली मिट्टी कहते हैं और यदि बारीक कणों की मात्रा ज्यादा हो, तो उसे चिकनी मिट्टी कहते हैं। जब बारीक और मोटे कण लगभग बराबर मात्रा में मिले हों तो उसे दोमट कहते हैं।

मिट्टी में पानी

एक उफननली लीजिए। उसमें किसी नमूने की दो

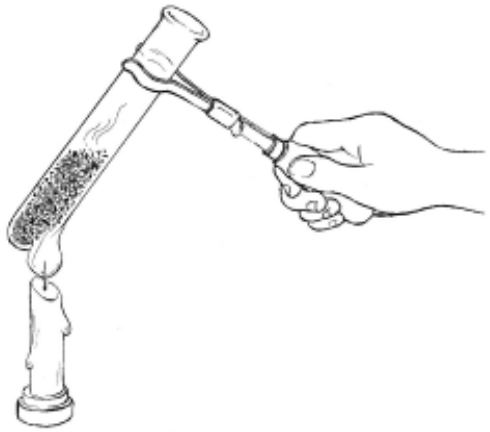

चम्मच मिट्टी डालिए। इसे चिमनी पर गर्म कीजिए।

गर्म करने पर क्या होता है?

क्या आपने कहीं पानी दिखाई दिया? यदि हां, तो आपने पानी को कैसे पहचाना?

गर्म करने के बाद मिट्टी को उफननली से बाहर निकालिए।

इसकी तुलना बिना गर्म की गई मिट्टी से कीजिए।

दोनों में कुछ अंतर है या नहीं? यदि है, तो क्या? अपने शब्दों में समझाकर लिखिए।

प्रयोग बारिश होने या सिंचाई के एकदम बाद मत करना, इससे अवलोकन ठीक नहीं आएंगे। बारिश या सिंचाई के कम–से–कम 48 घंटे बाद ही ये प्रयोग करना।

मिट्टी का प्रकार

अपने द्वारा लाई गई मिट्टी में से लगभग 20–25 ग्राम मिट्टी लीजिए। इसमें से कंकड़, पत्थर, घास वगैरह निकालकर फेंक दीजिए। अब इसमें बूंद–बूंद करके पानी डालिए और सानते जाइए। पानी इतना डालिए कि मिट्टी का गोला बन जाए, पर वह हाथ पर न चिपके। इस मिट्टी से लगभग 2. 5 सेमी व्यास की एक गेंद बना लीजिए। किसी समतल पटिए पर इस गेंद से 15 सेमी. लंबा एक बेलन बनाने की कोशिश कीजिए। यदि बेलन बगैर टूटे मुड़ सकता हो, तो इससे एक वृत्त बना लीजिए।

मिट्टी को जिस हद तक ढाला जा सकता है, इससे हमें मिट्टी के प्रकार का पता चलता है।

कौन–सी मिट्टी किस प्रकार की है, यह पता लगाने के लिए आइए, एक आसान–सा प्रयोग करें।

1. अगर आपको मिट्टी के खिलौने, बर्तन या मूर्तियां बनानी हो तो कौनसी मिट्टी लोगे और क्यों?

   ——————————————————

2. घर की दीवारों की लिपाई के लिए कौनसी मिट्टी लेना ठीक रहेगा?

   ——————————————————

3. रेत का इस्तेमाल कहां–कहां किया जाता है? क्या रेत में कोई फसल उगाई जाती है? चर्चा कीजिए।

4. आपके आसपास की मिट्टी कैसी है?

   ——————————————————

यह सामग्री बाल वैज्ञानिक कक्षा–8 की पुस्तक एवं विभिन्न स्रोतों के आधार पर तैयार की गई है।
विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, उदयपुर में कार्यरत।

गुणवत्तापूर्ण प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण परियोजना की चंद तस्वीरें

जिन्हें चांद से ही खेलना नसीब हुआ

सचमुच कई घरों में
खिलौने नहीं होते थे
तभी तो मांएं
बच्चों को चांद दिखाकर बहलाती थी

कई बार तो देखने में आया
बच्चे सूखी रोटी खाने से पहले
उसकी गोलाई से खेलते

कोई मां के साथ
चूल्हे की आग फूंकते समय
फूंकनी से आवाज़ के खेल खेलता

कोई खेलता धूल उड़ाते हुए
अपने छोटे भाई–बहन से ही

बहुत सीमित थी
चमक–दमक की
दुनिया के बाज़ार में अटे पड़े खिलौनों की
परिधि से बाहर फेंक दिए जा चुके
नन्हे मनों की खेलने की अभिलाषाएं
जो कुचलती थी
अपनी रंगीन हसरतें
शो–रूम के दरवाज़े पर ही

जिसके नसीब में खिलौने नहीं थे
वे बड़े तो हुए मगर
अब चांद के बाद
उनकी आकांक्षा
सूरज को मुट्ठी में करने की थी।